खण्ड 2
बच्चों तथा किशोरों में विकासात्मक कारक

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 2 मानव विकास का परिचय*

संरचना

2.0 प्रस्तावना

2.1 विकासात्मक मनोविज्ञान में समस्याएँ एवं विषय–वस्तु

2.1.1 आनुवंशिकता तथा पर्यावरण की समस्या

2.1.2 सतत-असतत विकास

2.1.3 स्थिरता – परिवर्तन

2.2 जीवनपर्यंत विकास

2.2.1 जीवनपर्यंत विकास के सिद्धांत

2.3 व्यक्तिगत भिन्नताएँ : अनुवांशिकता तथा पर्यावरण की भूमिका

2.3.1 आनुवंशिक वंशागति की भूमिका

2.3.2 पर्यावरणीय घटकों की भूमिका

2.4 सारांश

2.5 मुख्य शब्द

2.6 पुनरावलोकन प्रश्न

2.7 संदर्भ एवं पढ़ने के सुझाव

2.8 ऑनलाइन संसाधन

सीखने के उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- विकासात्मक मनोविज्ञान में बार–बार आने वाले प्रसंग एवं समस्याओं का वर्णन कर सकेंगे;
- मानव विकास जीवनकाल के परिप्रेक्ष्य में मानव विकास के प्रमुख सिद्धांतों की व्याख्या कर सकेंगे; तथा
- मानव-विकास की प्रक्रिया में अनुवांशिकता तथा पर्यावरणीय घटकों की भूमिका का वर्णन कर सकेंगे।

2.0 प्रस्तावना

मानव-प्रजाति सृष्टि का सबसे अधिक विकसित जीवन-रूप है। मनुष्य की अन्वेषी व मर्म-भेदिनी प्रकृति ने दुनिया तथा ब्रह्मांड के रहस्यों को उजागर करने में निरन्तर प्रयास किए हैं जिसके परिणाम स्वरूप विज्ञान के विविध रूपों का विकास हुआ है। मानव-विकास विज्ञान का एक क्षेत्र है जो गर्भ धारण से लेकर मृत्यु तक की मनुष्य के विकास की प्रक्रिया को दर्शाता है। विज्ञान की इस शाखा की स्थापना उन वैज्ञानिकों ने की थी जो अपनी (अर्थात मानव-प्रजाति) प्रजाति का अध्ययन कर रहे थे। अपने

* डॉ. ध्वनि पटेल, भूतपूर्व सहायक प्राध्यापक, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वडोदरा

निजी विचारों तथा अनुभवों के आधार पर उन्होंने मानव-विकास के सिलसिले को समझने का प्रयास किया। उदाहरण के लिए, **जीन पियाजे** ने अपने स्वयं के तीन बच्चों के विकास क्रम का बारीकी से अध्ययन किया और बच्चों में संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत को बताया। मानव-विकास क्रम को समझने के लिए किसी व्यक्ति के जीवन में घटित होने वाली घटनाओं को जान लेना काफी नहीं है, परन्तु यह जानना भी जरूरी है कि विभिन्न परिस्थितियों में जीवन-संक्रमण के दौरान, मनुष्य ने जीवित रहने तथा जीवन में आगे बढ़ने के लिए किस प्रकार तालमेल बैठाया जाए। इस इकाई में हम विकासात्मक मनोविज्ञान के प्रमुख विषय को केंद्र में रखते हुए जीवनपर्यंत विकास के आधारभूत सिद्धांतों तथा व्यक्तिगत विविधताओं के अस्तित्व एवं विकास में वंशानुगतता व बाहरी परिस्थितियों की भूमिका का अध्ययन करेंगे।

2.1 विकासात्मक मनोविज्ञान में समस्याएं एवं विषय–वस्तु

मानव-विकास क्रम का अध्ययन करते समय मन में अनेक प्रश्न उत्पन्न होते हैं। मनुष्य की बुद्धिमत्ता वंशानुगतता पर आधारित होती है या जीवन में किये गये अनुभवों के आधार पर? क्या शर्मीला बच्चा विकसित होकर शर्मीला युवक बनता है? मानव-विकास के बारे में विकसित सिद्धांतों तथा अनुभवों के माध्यम से प्राप्त होने वाली जानकारियाँ, मनुष्य के विकास क्रम से जुड़ी विविध समस्याओं तथा विषयों को समझने में सहयोगी हो सकती हैं।

2.1.1 आनुवंशिकता तथा पर्यावरण की समस्या

मनुष्य के चरित्र पर वंशानुगतता का प्रभाव पड़ता है – मनुष्य की भौतिक विशेषताएँ मानसिक क्षमताएं, व्यक्तित्व तथा सामाजिक व्यवहार के तरीके, आदि मिलकर मनुष्य के चरित्र का निर्माण करते हैं। बाहरी परिस्थितियों या पर्यावरण के समस्त घटक जिनमें भौतिक व सांस्कृतिक वातावरण भी शामिल है, व्यक्ति के विकास पर प्रभाव डालते हैं। किसी व्यक्ति के पालन-पोषण पर इन सब का केंद्रीय प्रभाव पड़ता है। आनुवंशिकता तथा पर्यावरण के विवाद पर दशकों तक चली बहस के बाद मानव विकास के अध्येयता सर्वसम्पति से इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मनुष्य के विकास के लिए वंशानुगतता तथा पर्यावरणीय घटक दोनों ही जिम्मेदार है, क्योंकि इनके बीच ही मनुष्य को पालन-पोषण होता है। अनुभाग 2.3 में आप इस विषय में विस्तार से अध्ययन करेंगे।

2.3.2 सतत-असतत विकास

जीवन में विकास की घटनाएं एक के बाद एक कैसे घटित होती चलती हैं, उनका अध्ययन करें तो सतता और असतता का क्रम विविध जीवन-अवस्थाओं (निरंतरता) में या अलग–अलग चरणों (अंतराल) में स्पष्ट देखा जा सकता है। सतत विकास-क्रम के समर्थक दावा करते हैं कि जीवन की विकास प्रक्रिया क्रमिक है तथा जुड़कर चलने वाली है। विकास से जुड़ी हर घटना उससे पहले वाली घटना के साथ जुड़ते हुए विकास क्रम को इस तरह आगे बढ़ाती है कि आरंभिक जीवन-अवस्था में 'घटित घटनाओं' के आधार पर आगे चलकर होने वाले विकास क्रम के बारे में अनुमान लगाया जा सकता है। ये परिवर्तन मात्रात्मक प्रकृति के होते हैं जो मनुष्य की शैली की मात्रा पर ध्यान केंद्रित करते हैं। सतत विकास का एक उदाहरण यह है कि मनुष्य का शरीर बढ़ना, जैसे उसकी लम्बाई का बढ़ना। मनुष्य में बड़े होने पर पारिवारिक

संबंधों का स्वरूप या दूसरों के साथ सम्बंधों का स्वरूप इस बात पर निर्भर करता है कि बचपन में उसके माता-पिता के साथ संबंध किस प्रकार के रहे हैं।

जो विचारक असतता के सिद्धांत में विश्वास करते हैं, वे मानते हैं कि विकास कुछ खास परिवर्तनों के माध्यम से होता है जो स्पष्ट परन्तु अप्रत्याशित ढंग से होते हैं। ये परिवर्तन गुणात्मक होते हैं तथा प्रत्येक अवस्था में अलग-अलग होते हैं। असतत विकास की अवधारणा में विश्वास रखने वाले अवस्था आधारित सिद्धांतों द्वारा साबित करते हैं कि विकास सीढ़ियों पर चढ़ाई करने जैसे क्रम में होता है जिसमें एक सीढ़ी पर चढ़ने के बाद विकास की दूसरी सीढ़ी पर चढ़ा जाता है। इसके अनुसार व्यक्ति में विभिन्न विकासात्मक अवस्थाओं से गुजरते हुए, जल्दी-जल्दी परिवर्तन होते हैं – ये परिवर्तन यकायक होते हैं, लगातार नहीं।

मनोवैज्ञानिक एक बात सर्वसम्मति से स्वीकार करते हैं कि सतत और असतत दोनों में से कोई भी एक पद्धति विकास क्रम की समग्र व्याख्या नहीं करती। यह सुझाव दिया जाता है कि कुछ विकास प्रक्रियाओं को सतत विकास सिद्धांत द्वारा और कुछ को असतत विकास सिद्धांत द्वारा बेहतर ढंग से समझा जा सकता है।

2.1.3 स्थिरता–परिवर्तन

जिस अनुपात में बचपन के लक्षण स्थिर रहते हैं और बड़े होने के साथ-साथ परिवर्तित होते हैं, यह स्थिरता परिवर्तन चिंता का विषय है जो विशेषज्ञ विकास में स्थिरता पर जोर देते हैं, वे आनुवांशिकतावादी दृष्टिकोण के होते हैं और जीन आधारित अनुवांशिकता को शीलगुण तथा विशेषताओं के विकास के लिए जिम्मेदार मानते हैं। अनुभववादी विचारक भी विकास में स्थिरता या नियमितता के नियम का समर्थन करते हैं। जबकि बचपन के अनुभवों के आधार पर जो मनोवैज्ञानिक विशेषताएँ मनुष्य में आती है, वे नहीं बदली जा सकतीं। इस प्रकार आनुवंशिकता दृष्टिकोण कहती है कि एक शर्मीला बच्चा वयस्क हो जाने पर भी शर्मीला ही रहेगा, परिस्थितियों के अनुसार उसमें सामाजिकता आ सकती है। दूसरी ओर अनुभववादियों के विचार से आरंभ के वर्षों में बच्चे के अंदर समाज से बचकर रहने की जो प्रवृत्ति आती है, वह बचपन में उदासीन व तनावपूर्ण अनुभवों के कारण बड़े होने के साथ-साथ बदलने लगती है और सामाजिक सम्पर्क अच्छा लगने लगता है। यद्यपि, समकालीन सिद्धांतवादी इस बात पर जोर देते हैं कि केवल आरंभिक जीवन के अनुभवों का ही नहीं, अपितु बाद के जीवन के अनुभवों का भी मनुष्य के विकास पर प्रभाव पड़ता है। हालांकि, विकासक्रम में परिवर्तन किस सीमा तक हो सकता है यह अस्पष्ट है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 1

1) निम्नलिखित कथनों में सत्य या असत्य?

   i) विकास का अवस्था आधारित सिद्धांत मानव-विकास में असतता की प्रवृत्ति का प्रतिनिधित्व करता है। (सत्य/असत्य)

   ii) विकास का सतता का सिद्धांत गुणात्मक अनुभवों को धारण करता है जबकि असतता का सिद्धांत मात्रात्मक अनुभवों को धारण करता है। (सत्य/असत्य)

   iii) केवल आरंभिक जीवन के अनुभव ही नहीं, अपितु बाद के जीवन के अनुभव भी विकास को प्रभावित करते हैं। (सत्य/असत्य)

iv) सहजवादी सोच कहती है कि बच्चे में शर्मीलापन जीवन के आरंभिक दिनों के अनुभवों के कारण होता है और बड़ा होकर वयस्क होने के बाद वह अपने आपको समाज से अलग कर लेता है। (सत्य/असत्य)

2.2 जीवनपर्यंत विकास

बीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में मानव विकास का अध्ययन करते समय, अनुसंधानकर्ताओं के केन्द्र में मनुष्य की शिशु अवस्था, बाल्यावस्था तथा वयस्क काल रहा करता था। ऐसा माना जाता था कि शिशु अवस्था में तथा बचपन में मनुष्य का विकास तीव्र गति से होता है और वयस्कावस्था में पहुंचने पर वह शीर्ष पर पहुंच जाता है। वयस्क अवस्था समाप्त होने के साथ ही मनुष्य का विकास रूक जाता है वयस्क अवस्था को विकास के मामले में स्थिर अवस्था माना जाता था और ऐसी धारणा थी कि वयस्क अवस्था के अंतिम चरण में पहुंचने के बाद विकास क्रम में गिरावट आने लगती है। परंतु औषधि तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नति हो जाने से अब यह स्पष्ट हो गया है कि मनुष्य की औसत अवस्था 60 से 80 वर्ष तक होता गई है। इसके अतिरिक्त एक बात और भी है कि बड़ी आयु के वयस्कों की संख्या न केवल बढ़ती जा रही है परंतु बड़ी संख्या में इस उम्र के लोग स्वस्थ एवं उपयोगी जीवन जी रहे हैं। इन अवलोकनों ने अनुसंधानकर्ताओं को इस बात के लिये विवश किया कि वे मानव विकास की प्रक्रिया का अध्ययन करते समय प्रौढ़ावस्था पर सबसे अधिक ध्यान दें। 1950 और 1960 के बीच मानव विकास पर होने वाले अनुसंधानों की दिशा में परिवर्तन आया और वे यह मानने लगे कि मनुष्य का विकास प्रौढावस्था के दौरान और उसके बाद भी होता है। इसमें विकास की धारणा में परिवर्तन आया और लोग यह मानने लगे कि विकास जीवनपर्यंत होता है और मानव विकास का आधार अब जीवनकाल माना जाने लगा। जीवनकाल विकास मनोविज्ञान का उद्देश्य मनोवैज्ञानिक लक्षणों में जीवनपर्यंत आने वाले ठहरावों और बदलावों को समझने तथा उनकी व्याख्या करने पर जोर देता है। ऐसा करते समय मनुष्य के अंदर होने वाले बदलावों तथा मनुष्य के बीच तुलनात्मक विकास मूलक बदलावों को केंद्र में रखा जाता हैं। **पॉल बी बेलेट्स** (1939-2006) जर्मनी के एक मनोवैज्ञानिक ने आयु बढ़ने की प्रक्रिया तथा जीवनपर्यंत परिप्रेक्ष्य के सिद्धांतों का वर्णन किया है, जिनका विवरण इस प्रकार है –

2.2.1 जीवनपर्यंत विकास के सिद्धांत

अ) विकास की प्रक्रिया जीवन पर्यंत चलती रहती है – गर्भ धारण से लेकर जीवन का अंत होने तक जीवनपर्यंत परिप्रेक्ष्य इस बात पर जोर देता है कि मानव जीवन में विकास किसी एक खास अवधि में नहीं होता। जीवन काल के दौरान हर अवधि विकास प्रक्रिया में योगदान अपनी तरह से देती है तथा जीवन में अवसर और चुनौतियां भी लाती है। किसी खास अवधि में होने वाली विकास प्रक्रिया को समझने के लिए पहली अवधि होने वाले विकास को समझना जरूरी होता है क्योंकि उसी के आधार पर अगली आयु अवधि में होने वाले विकास को समझा जा सकता है।

ब) विकास बहु-आयामी होता है – हर आयु अवधि में प्रायः तीन प्रमुख आयामों में विकास की प्रक्रिया घटित होती है – जैविक, संज्ञानात्मक तथा सामाजिक-

भावानात्मक। ये आयाम अलग-अलग नहीं है। हर आयु अवधि में विकास के तीनों आयाम एक दूसरे को आच्छादित भी करते हैं और परस्पर प्रभावित भी करते हैं। उदाहरण के लिए प्रौढ़ावस्था के मध्य काल में अनेक प्रकार के जैविक परिवर्तन होते हैं, जैसे बालों का सफेद होना या पतला होना, स्त्रियों में रजोनिवृत्ति का आना तथा वजन बढ़ जाना। इसी तरह संज्ञानात्मक परिवर्तनों में स्थानिक तर्क, मौखिक योग्यताओं तथा अमूर्त बुद्धिमत्ता में वृद्धि हो जाना आदि। प्रौढ़ावस्था के मध्यकाल में ही सामाजिक तथा भावनात्मक परिवर्तन भी होते हैं। जैसे, व्यक्तित्व में स्थिरता आने की प्रवृत्ति उत्पन्न होना। सम्बंधों में प्रगाढ़ता आना, आदि। यह जीवनपर्यंत परिप्रेक्ष्य में बहु आयामी विकास को दर्शाता हैं।

स) विकास बहु–दिशात्मक हैं – किसी क्षेत्र विशेष में होने वाला विकासात्मक परिवर्तन अनुरेखीय पद्धति का पालन नहीं करता। बल्कि यह क्षमता में बढ़ोतरी या गिरावट दिखाता है। बाल्टीज ने *'सलैक्टिव ऑप्टीमाइजेशन विद कम्पेंसेशन'* की संज्ञा दी है। अर्थात 'क्षतिपूर्ति सहित चुनिंदा अनुकूलन' जिसमें खास कार्यों को अन्य चीजों की क्षमता कम करने के लिए वरीयता दी जाती है। व्यक्ति जिन कामों में लगे होते हैं, वे उनमें कमी ले आते हैं और कुछ खास कामों को अंजाम देने लगते हैं जिनमें वे बची हुई कम से कम ऊर्जा खर्च करके अधिक से अधिक परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। इस प्राप्ति/हानि की अवधारणा की व्याख्या प्रौढ़ावस्था में प्राप्त बौद्धिक क्षमताओं की सहायता से की जा सकती है। बौद्धिकता को व्यापक रूप से दो श्रेणियों में विभाजित किया गया है – एक है, 'तरल बौद्धिकता', दूसरी 'ठोस बौद्धिकता'। 'तरल बौद्धिकता' से आशय बौद्धिकता के उस रूप से है जिससे नई जिम्मेदारियों को अमूर्त रूप से शीघ्रता के साथ सीखा जा सकता था। 'ठोस बौद्धिकता' से आशय संकलित ज्ञान से है जो जीवन के अनुभवों के माध्यम से एकत्रित की जाती है। प्रौढ़ावस्था के वर्षों में जब बढ़ती आयु के साथ 'ठोस बौद्धिकता' में वृद्धि होती है और द्रव बौद्धिकता घटने लगती है।

द) विकास लचीला हैं – जीवनपर्यंत विकास की अवधारणा इस बात पर जोर देती है कि सभी आयु-अवधियों में होने वाला विकास अपनी जगह सुस्थिरता के साथ घटित होता रहता है और उम्र के साथ ही विकास भी ढलने लगता है। विकास प्रक्रिया में निहित स्थिरता वैयक्तिक के विभिन्नताओं की साक्षी है। कुछ लोग जीवन में प्राप्त हुए व्यापक अनुभवों के कारण बदली हुई परिस्थितियों के साथ आसानी से अनुकूलन कर लेते हैं।

न) विकास बहुविषयी होता है – विकास का कोई एक आयाम व्यक्ति के विकास से जुड़े सभी पहलुओं को समग्रता के साथ नहीं दर्शा सकता है। जीवन पर्यंत विकास की अवधारणा इस बात पर जोर देती है कि विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए विकास के सभी पहलुओं को एक साथ रखकर समझना जरूरी है। मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, शिक्षाशास्त्र, मानव-विज्ञान, अर्थशास्त्र, इतिहास तथा औषधि विज्ञान आदि से जुड़े विद्वान, मानव विकास से जुड़ी उन अवधारणाओं की व्याख्या करने में अपना योगदान दे सकते हैं जो जीवनपर्यंत होने वाली विकास प्रक्रियाओं के बारे में समग्र जानकारी प्रदान करते हैं।

प) विकास प्रासंगिक होता है – जीवनपर्यंत चलने वाली विकास-प्रक्रिया की अवधारणा यह बताती है कि विकास विविध संदर्भों से जुड़ा होता है। व्यक्तियों

की तरह संदर्भ भी बदल जाते हैं। संदर्भों द्वारा दो प्रकार के प्रभाव जोड़े जाते हैं। एक प्रकार के प्रभाव मानक हैं तथा दूसरे प्रकार के प्रभाव गैर–मानक होते है। दोनों प्रकार के प्रभाव एक साथ काम करते हैं। वे विशिष्ट ढंग से एक दूसरे से जुड़े होते हैं और मिलकर परिवर्तन के पथ तैयार करते हैं जो अनेक प्रकार के होते हैं।

i) मानक प्रभाव – वे घटनाएं जो हर व्यक्ति की अपने प्रकार की होती हैं। मर्यादित प्रभाव दो तरह के होते है। आयु – आधारित तथा इतिहास या अतीत आधारित। आयु-आधारित प्रभाव जैविक उम्र के अनुसार घटित होते हैं। जैसे रजोनिवत्ति, तरुणाई का उदय, विद्यालय में प्रवेश, अवकाश ग्रहण करना, आदि। इतिहास या अतीत – आधारित प्रभाव किसी अवधि विशेष से जुड़े होते हैं, जो व्यापक संदर्भ प्रदर्शित करते हैं जैसे द्वितीय विश्व युद्ध, वर्तमान काल में फैली विश्व व्यापी कोरोना महामारी।

ii) गैर–मानक प्रभाव – गैर–मानक प्रभाव वे घटनायें है जो किसी व्यक्ति के जीवन में विशेष होती हैं तथा जिनका किसी विशेष विकास अवधि से संबंध नहीं होता, उदाहरण के लिये विदेश में नौकरी या उच्च शिक्षा प्राप्त करना, बच्चे की मृत्यु, अथवा तलाक।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 2

नीचे दिये गए वाक्यों में से प्रत्येक वाक्य जीवन पर्यंत विकास के सिद्धांत की व्याख्या करता है। प्रत्येक वाक्य के सामने सही विकास सिद्धांत का नाम लिखिए–

i) किशोरावस्था में, भौतिक तथा शारीरिक परिवर्तन जैसे हार्मोन में परिवर्तन, ज्ञान संबंधी परिवर्तन, जैसे सोचने की क्षमता में वृद्धि तथा शारीरिक परिवर्तन जैसे –हम उम्र व्यक्तियों को जीवन में प्राथमिकता देना। .....

ii) क्षतिपूर्ति सहित चुनिंदा अनुकूलन की प्रक्रिया आरंभ होती है। .....

iii) मानव विकास प्रक्रिया किसी एक जीवन अवधि में पूरी नहीं हो जाती। .....

iv) मानक तथा गैर–मानक प्रभाव व्यक्ति के विकास में विविधता लाने के लिये पारस्परिक क्रिया करते हैं। .....

2.3 व्यक्तिगत भिन्नताएँ : अनुवांशिकता तथा पर्यावरण की भूमिका

बॉक्स 2.1: स्वयं करने की क्रिया

उन लक्षणों की सूची तैयार कीजिए जो आपके अंदर मौजूद हैं – जैसे – लंबाई, मोटापा, बौद्विकता, सहयोग की भावना आदि हर उस लक्षण के आगे जिसे आपने अपने माता-पिता या परिवार के सदस्यों से प्राप्त किया है, उसके आगे अ लिखिए तथा जिन विशेषताओं को पर्यावरण के प्रभाव से आपने स्वयं विकसित किया है, उनके आगे प लिखिए (जैसे आपका परिवार, विद्यालय जाना, संगी-साथी, आदतें या शौक आदि।)

मनुष्य का विकास एक जटिल प्रक्रिया है, जिसमें अनुवांशिक घटकों तथा पर्यावरणीय घटकों का योगदान कुछ इस प्रकार होता है कि कोई दो व्यक्ति एक से नहीं होते हैं।

मुनष्य की प्रकृति और उसका पालन-पोषण दोनों की मनुष्य के विकास में भूमिका होती है, प्रकृति अनुवांशिक होती है तथा पालन-पोषण परिस्थिति आधारित होता है। इन दोनों के सहयोग से हर मनुष्य का अलग-अलग विकास होता इस लिए प्रत्येक व्यक्ति एक-दूसरे से अलग दिखता है। कुछ विद्वान विकास प्रक्रिया में प्रकृति या अनुवांशिकता की भूमिका को ज्यादा महत्व देते हैं और यह मानकर चलते हैं कि मनुष्य का विकास अनुवांशिकता के आधार पर चलता है। उनका यह मानना है कि इसी कारण से मनुष्यों में समानतायें होती हैं। उदाहरण के लिये बाल्यावस्था की तुलना में शैशवावस्था में वृद्धि ज्यादा तेज गति से होती है, मनुष्य पहले चलना सीखता है, फिर बोलना। कहीं-कहीं पर पर्यावरण अथवा बाहरी परिस्थितियों की भूमिका अधिक दिखाई पड़ती है (जैसे – कुपोषण, माता-पिता द्वारा उपेक्षा)। ऐसी स्थिति में विकास की प्रक्रिया में बाधा पहुंचती है। इससे वृद्धि की मूलभूत संभावनायें अवरूद्ध होती हैं। जबकि अनुवांशिक रूप से वृद्धि एक सामान्य प्रवृत्ति होती है, मनोवैज्ञानिक इस बात पर विशेष जोर देते हैं कि मनुष्य की विकास प्रक्रिया को बाहरी परिस्थितियों विशेष रूप से प्रभावित करती हैं। बाहरी परिस्थितियों से होने वाले अनुभवों को दो श्रेणियों में बांटा जा सकता है – एक जैविक पर्यावरण (पौष्टिक आहार, स्वास्थ्य एवं सुरक्षा) दूसरा सामाजिक पर्यावरण (सांस्कृतिक घटक, परिवार, विद्यालय, धर्म, मीडिया) उदाहरण के लिये, शोधार्थी यह साबित कर चुके हैं कि बच्चों के अनुभवों और व्यक्तित्व पर माता-पिता तथा उनकी जीवन शैली का किस प्रकार प्रभाव पड़ता है।

आनुवंशिकता और पर्यावरण पर दशकों तक चली बहस के बाद मानव विकास तथा विकासात्मक मनोविज्ञान से जुड़े विचारक इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि मनुष्य का विकास आनुवंशिकता और पर्यावरण दोनों के मेल से संभव हो पाता है। यह तय कर पाना मुश्किल है कि मनुष्य के विकास में आनुवंशिकता का अथवा पर्यावरण का योगदान अधिक होता है। व्यवहारवादी अनुवांशिकता मनोविज्ञान का नया उभरता क्षेत्र है जिसके आधार पर यह पता लगाया जा सकता है कि मनुष्य के व्यवहार के विकास में कितनी भूमिका अनुवांशिकता है और कितनी जीवन में प्राप्त होने वाले अनुभवों की होती है।

बॉक्स 2.2 : क्या आप जानते हैं?

'विभेदक मनोविज्ञान' (डिफरेंशल साइकोलॉजी) मनुष्यों की भिन्नताओं का अध्ययन करती है। विभेदक मनोविज्ञान मनुष्यों तथा जीवधारियों में अधिक विकसित प्राणी चिम्पांजी तथा चूहों के मनोविज्ञान का अध्ययन करते है। मनोविज्ञान के एपीए शब्दकोश के अनुसार ''मनोविज्ञान की वह शाखा जो मनुष्य के बीच तथा मनुष्य की मानव समूह के बीच अंतर की प्रकृति, परिणामों एवं कारणों तथा ऐसी विविधताओं का आकलन करने की विधियों का अध्ययन करती है, उसे विभेद मनोविज्ञान कहा जाता है।'' व्यक्तिगत भिन्नताओं से संबंधित प्रश्न, जैसे वे कैसे सोचते हैं? कैसे अनुभव करते हैं? उनकी इच्छायें व आवश्यकताएं क्या हैं? और वे क्या करते हैं? आदि प्रश्नों के उत्तर इसमें निहित है।

2.3.1 आनुवंशिक वंशागति की भूमिका

गर्भ धारण के समय जब निषेचन क्रिया के फलस्वरूप भ्रूण का निर्माण का काम शुरू होता है, तभी एक नया प्राणी विकसित होने लगता है। निवेचन से एक कोशिकीय जीव बनता है जिसे भ्रूण कहा जाता है। इसकी संरचना में 46 स्वयं ही अनेक

कोशिकाओं में विभाजित होने लगती है – एक से दो – दो से चार – और इस प्रकार कोशिकाओं का एक बड़ा समूह बन जाता है जो भ्रूण का आकार ले लेता है। दो असाधारण परिस्थितियों में जुड़वाँ तैयार होते हैं – एक ही अंडा (मोनोजायगोटिक या समान जुड़वा) यदि एक ही लिंग के 46 एक जैसे गुणसूत्र धारण करता है यदि स्त्री एक से अधिक अंडे निस्रित करती है और वे निषेचित हो जाते हैं तो इसके परिणामस्वरूप असमान जुड़वाँ पैदा होते हैं जिनकी समानजनिक बनावट साझा नहीं होती है। मानव विकास के क्षेत्र में समान तथा असमान जुड़वाँ बच्चों पर प्रकृति और परवरिश के प्रभाव पर अनेक अनुसंधान हो चुके हैं।

विकासात्मक अनुवांशिकता एक ऐसा क्षेत्र है जो यह बताने का प्रयास करता है कि अनुवांशिकता जीवन पर्यंत चलने वाली विकास प्रक्रिया में किस सीमा तक अपनी भूमिका निभाती है। अनुवांशिकतावादी यह जानने में रुचि लेते हैं कि जीन किस प्रकार मानव – विशेषताओं का प्रेषण करते हैं और एक ही परिवार के लोगों के जीन प्रायः खास तरह के ही क्यों होते हैं। जीन जिन रसायनों के बने होते हैं उन्हें डीआक्सीराइबो–न्यूक्लिक एसिड (डीएनए) कहा जाता है। डीएनए अणु के दो किनारे होते हैं – दोनों चीनी और फॉस्फेट से युक्त होते हैं। दोनों किनारे एक दूसरे से लिपटे रहते हैं और मिलकर सर्पिल सीढ़ियों का ढांचा बनाते हैं। ढांचे की सीढ़ियाँ जो दोनों किनारों को मिलाती है, उन्हें अमीन कहा जाता है। ये अमीन कि संरचनाएं है जिनमें जीन के कोड होते हैं और कोशिका के जीवन को नियंत्रित करते हैं। जीन, के हर अनुभाग में एक जैसे क्रम में अमीन जड़े रहते हैं, जिन्हें जीन कहा जाता है। जीन, रॉड के आकार की संरचनाओं में सुरक्षित रहते हैं, जिन्हें गुण-सूत्र कहा जाता है। ये गुण-सूत्र कोशिका के केंद्रीय भाग में स्थित होते हैं। मानव-शरीर की हर कोशिका से 46 गुण सूत्र होते हैं जिनमें से 23 माँ के अंडे से तथा 23 पिता के शुक्राणु से आते हैं। गुण-सूत्रों के 22 जोड़े मनुष्य के लक्षणों या विशेषताओं का निर्माण करते है; इन्हें ऑटोसोम कहा जाता है। गुण-सूत्रों का अंतिम जोड़ा लैंगिक गुण-सूत्र कहलाता है, यह व्यक्ति की लैंगिकता का निर्धारण करता है।

विशेषताओं का जीन आधारित प्रेषण, जीन के एक से अधिक जोड़ो द्वारा किया जाता है। इस प्रक्रिया को पॉलिजैनिक वंशागति कहा जाता है। जीन में अपनी विशेषताएं सम्मिलित होती हैं (उदाहरण, आंखों का रंग तथा बालों का रंग)। ऐसे जीन का प्रभावशाली जीन कहा जाता है। ऐसे जीन का मिलन जब किसी खास जीन से किया जाता है, तब उन्हें अप्रभावी जीन या वंशानुगत गुण कहा जाता है। प्रभावशाली तथा प्रभावी जीन जब आपस में मिलते हैं, तब प्रभावशाली जीन विशेषताएँ उत्पन्न करने वाले प्रभाव छोड़ता है। यदि दोनों अप्रभावी जीन मिलते हैं तो जीन के प्रभाव से उपजे गुणों या विशेषताओं का निर्धारण अप्रभावी जीन द्वारा ही किया जाता है। अप्रभावी जीन अनेक प्रकार के जीन आधारित विकारों का प्रेषण करते हैं, जैसे – *सिकिल सैल एनीमिया* तथा *टे–साख्स रोग*। प्रायः जीन सम्बंधी विकार गुणसूत्रों की असामान्यताओं के कारण उत्पन्न होते हैं, जैसे अतिरिक्त गुण-सूत्र की 21वें जोड़े में उपस्थिति के कारण *डाउन सिंड्रोम* रोग उत्पन्न होता हैं तथा एक अतिरिक्त लैंगिक गुण सूत्र 23वें जोड़े उपस्थित हो तो *क्लाइन्फेल्टर्स सिंड्रोम* नामक रोग उत्पन्न होता है।

2.3.2 पर्यावरणीय कारकों की भूमिका

दशकों तक मनोविज्ञान की व्यक्तिपरक भिन्नताओं को महत्व देने वाले विज्ञान के रूप में जाना गया। व्यक्ति अकेला नहीं रह सकता। मनुष्य को अपना जीवन चलाने के

लिए पर्यावरण के साथ जूझना पड़ता है, भले ही वह स्वस्थ हो या अस्वस्थ। अकेले-अकेले मनुष्य और अलग-थलग पर्यावरण का कोई महत्व नहीं है। मनुष्य का पर्यावरण के साथ रच-बस कर रहना, जीवन के स्वरूप को तथा मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं को दर्शाता है। पारंपरिक प्राथमिकताओं को एक ओर रखते हुए बीते कुछ दिनों से मनोवैज्ञानिक सामाजिक घटकों के संदर्भ में मनुष्यों की शक्तियों व्याख्या कर रहे हैं।

कर्ट लेविन (जर्मन-अमेरिकन मनोवैज्ञानिक, 1890-1947) ने एक सिद्धांत को जन्म दिया जो यह बताता है कि मनुष्य एक खास समयावधि में किये गये कार्यों के कारण समाज में अपना स्थान बनाता है। बाल्यावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक मनुष्य के सामाजिक पर्यावरण में अनेक क्षेत्र शामिल होते हैं, जिनमें कुछ निकटवर्ती, कुछ अभिगम्य और कुछ अगम्य हो सकते हैं। वयस्क मनुष्य का व्यवहार उसी क्षेत्र के अनुसार होता है, जिस क्षेत्र में उसने अधिक समय दिया है। जब वह नये क्षेत्र के सम्पर्क में आता है तो उसके लिए वह एक अपरिचित क्षेत्र होता है, इसलिए वह यकायक यह तय नहीं कर पाता कि किस तरह का व्यवहार करे। इस प्रकार विभिनन आयु-अवधियों के बीच विकास में होने वाला संक्रमण द्वंद पैदा करता है क्योंकि उस समय उद्देश्य प्राप्त करने की दिशा स्पष्ट नहीं होती। लेविन, जीवन के परिदृश्य को सभी 'जीवन-अवधियों' में पड़ने वाले प्रभाव के योग तथा पर्यावरण का प्रतिफल मानते है। इसके लिए कोई एक सूत्र का इस्तेमाल करने के बारे में लेविन ने कहा है – ''किसी अवधि विशेष में मनुष्य का उसके वातावरण के साथ अंतर्व्यवहार का परिणाम ही, अंततः मनुष्य का व्यवहार होता है।'' (B=F {P,E}) इसमें B मनुष्य का व्यवहार, F मनुष्य के कार्य तथा P व्यक्ति और E पर्यावरण है।

दुर्गानंद सिन्हा का पारिस्थितिक प्रतिमान (1977) भारतीय संदर्भ में बच्चे के विकास की व्याख्या करता है। वह पर्यावरणीय प्रभावों को दो पर्तों के रूप में देखता है – (i) ऊपरी तथा अधिक स्पष्ट पर्त, (ii) प्रतिवेश तथा सहयोगी पर्त।

i) **ऊपर व स्पष्ट (दृश्य) पर्त**

सिन्हा के पारिस्थितिकी मॉडल के अनुसार ऊपर की अधिक स्पष्ट दिखने वाली पर्त में घर, स्कूल तथा साथियों के प्रभाव समाहित होते हैं। इस पर्त में आने वाले सभी घटक बच्चे के निकटतम होते है तथा उसके विकास पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालते हैं।

i) परिवार – पश्चिमी देशों के समाजों में बच्चे के विकास पर मुख्यतः पालन–पोषण शैलियों तथा अंतर्व्यवहारों के प्रभावों को चित्रित किया जाता है। विकासात्मक मनोवैज्ञानिक **डायना बॉम्रिंड**, ने 1960 में पालन–पोषण की शैलियों को चार भागों में बांटा था – आधिकारिक, निरंकुश, उदार तथा लापरवाह या गैर–जिम्मेदार, पालन-पोषण की शैलियों का बच्चे के व्यवहार तथा कार्य-निष्पादनों से सम्बंधों का पता लगाने का प्रयास किया गया। यद्यपि सम्बंधों से जुड़े अध्ययन कसौटी पर पूरी तरह खरे नहीं उतरे। फिर भी इतना तो स्पष्ट है कि बच्चे की प्रकृति को देखकर यह पता लगाया जा सकता है कि उसका पालन-पोषण कैसा रहा होगा। छोटे बच्चे तथा बड़े बच्चे के साथ माता-पिता का व्यवहार अलग-अलग होता है। यद्यपि बच्चे के संबंधियों में सबसे अधिक निकट तथा प्रभाव छोड़ने वाले माता-पिता ही होते हैं जो भविष्य में बच्चे के दूसरों के साथ सम्बंधों की जमीन तैयार करते हैं। फिर भी घर में बच्चे के विकास को प्रभावित करने वाले केवल माता-पिता ही नहीं होते।

अधिकतर भारतीय परिवारों में बच्चों की देखभाल करने का दायित्व दादा-दादी, नाना-नानी निभाते हैं, क्योंकि उनके पास ऐसे दायित्व निर्वाहन हेतु समय होता हैं भारतीय संस्कृति में बड़ों का आदर करना तथा उनके प्रति व्यवहार में दादा-दादी/नाना-नानी, के प्रति किये जाने वाले व्यवहार तथा दादा-दादी/नाना-नानी के उनके साथ किये गये व्यवहारों का प्रभाव समाहित हो जाता है। छोटे बच्चों को अपने परिवार की परम्पराओं का निर्वहन करना तथा नैतिक व धार्मिक मूल्यों को धारण करना पुरानी पीढ़ी के व्यक्तियों द्वारा सिखाया जाता है। इस प्रकार भारत में बच्चों को दोहरी लालन-पालन प्रक्रिया से गुजरना पड़ता है। भारत में प्रायः परिवारों के ढांचे संयुक्त रहे हैं। पारम्परिक रूप से यह एक सच है परन्तु वर्तमान की बदली हुई परिस्थितियों में एकल परिवारों का चलन तेजी से बढ़ा है और संयुक्त परिवारों का चलन घटता जा रहा हैं। फिर भी परिवार चाहे संयुक्त हो अथवा एकल परिवार, भारतीयों की बहुत बड़ी ताकत हैं, यह उनके लिए एक वरदान है। परिवार में सदस्यों की संख्या पर विचार न भी करे तो भी भारतीय परिवारों की पहचान आज भी उनके परिवारों के अन्य सदस्यों के साथ संबंध से होती हैं। परिवारों की विशालता तथा विविधता पर आधारित क्षेत्रीय विविधताएं, रिश्तेदारी होती प्रथा में मौजूद रहती हैं। परिवार के बाद, रिश्ते-नातों से जुड़े मानव-समूह दिन-प्रतिदिन की घटनाओं में, सामाजिक कार्यक्रमों व उत्सवों के अवसर पर विशेष रूप से महत्वपूर्ण माने जाते हैं।

बच्चे का आरंभिक विकास घर के वातावरण में होता है जो बच्चे के पालन-पोषण में सहयोगी सुरक्षित तथा प्रेरक होता है और आरंभिक जीवन काल के विकास के लिए जरूरी है। घरेलू वातावरण के परिवार की सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि द्वारा निर्मित होता है जिससे बच्चों सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव ग्रहण करता है। जैसे, अमीर परिवार के बच्चे बहुत जल्दी खिलौनों तथा किताबों में रूचि लेने लगते है, इनसे उन्हें प्रेरणा मिलती है। विद्यालय जाना आरंभ करने से पहले ही इन बच्चों को यह बात सीखा दी जाती है कि शिक्षा संस्थान में जाकर वे बेहतर ढंग से किस प्रकार सीखेंगे। खेल-खेल में बच्चों को पढ़ने तथा कहानियाँ सुनाने, कलाकृतियाँ बनाने, जैसी प्रक्रियाओं में डाल दिया जाता है जो बच्चे के संज्ञानात्मक विकास में सहयोगी होती हैं। इसी प्रकार, माता-पिता का शैक्षिक स्तर भी बच्चों के आरंभिक अवस्था में पढ़ने के प्रति रूझान उत्पन्न कराने में मददगार साबित होता है। घरेलू वातावरण बच्चे को सुरक्षा का भी निरंतर अहसास कराता रहता है जिसकी विकास प्रक्रिया में रचनात्मक भूमिका होती है। बड़ों की देखभाल के कारण बच्चे शारीरिक या भावनात्मक नुकसान होने से भी बचे रहते हैं। संयुक्त परिवार प्रणाली बच्चे की सुरक्षा एवं देखभाल में रचनात्मक भूमिका निभाती है। काम-काजी माता-पिता को घर पर बच्चों की देखभाल के लिए, आया को रखना पड़ता हैं। निम्न-मध्यम आय वर्ग के माता-पिता, बच्चे की देखभाल के लिए किसी को रख नहीं सकते, या संस्थानों का खर्च नहीं उठा सकते, उन्हें अपने बच्चों को घर पर अकेला ही छोड़ना पड़ता है ऐसे में बड़ा बच्चा छोटों की देखभाल की जिम्मेदारी निभाता है।

घनी आबादी वाले क्षेत्रों में इस प्रकार असुरक्षित बच्चे उपेक्षा के शिकार हो सकते हैं या फिर उनका गलत लोगों के हाथों शोषण भी हो सकता है।

ii) साथी – तीन वर्ष से कम की आयु के बच्चे दूसरे बच्चों के साथ व्यवहार करना आरंभ कर सकते हैं परन्तु इस अंतर्व्यवहार की अवधि लम्बी नहीं होती है। आरंभिक अवस्था में प्रायः बच्चे अपनी मस्ती में खेलते रहना पसंद करते हैं वे अपने चारों ओर मौजूद चीजों के सम्पर्क में आना आरंभ कर देते हैं। बाल्यावस्था के मध्यकाल तक पहुँचते-पहुँचते बच्चों की सम्पर्क में आने की प्रवृत्ति की गुणवत्ता में और सम्पर्क अवधि में भी वृद्धि हो जाती है। अब बच्चा सामाजिक सम्पर्क के महत्व को समझने लगता है। उसमें सोशल नेटवर्क की समझ उत्पन्न हो जाती है और दूसरे बच्चों के साथ दोस्ती की प्रवृत्ति, उसमें जन्म लेने लगती है। हमउम्र बच्चों के साथ चीजों तथा भावनाओं के आदान-प्रदान से बच्चों में सहयोग, सहकार तथा प्रतियोगिता की भावना पैदा होने लगती है जो बच्चे में सहन-शक्ति का विकास करती है।

विभिन्न प्रकृतियों वाले बच्चों के साथ सम्पर्क में आने का सिलसिला, विद्यालय जाने से पहले ही आरंभ हो जाता है। इससे बच्चे विभिन्न प्रकार की जरूरतों तथा समस्याओं का भी अहसास करते हैं जो उनके संज्ञानात्मक प्रक्रिया के विकास के लिए तथा समाज के साथ ताल-मेल बिठाने के लिए आवश्यक हैं। यहीं पर बच्चे में सामाजिक प्रतिष्ठा, अर्थात अन्य बच्चों के बीच अपने महत्व को समझने की प्रवृत्ति का उदय होता है जिसके कारण बच्चा सही या गैर सही व्यवहार में अंतर करना सीख जाता है। कुछ बच्चें प्रकृति से शर्मीले और कुछ आक्रमक होते हैं, वे अपने साथियों के बीच ज्यादा पसंद नहीं किये जाते। दूसरों की तुलना में वे इस सबकी ज्यादा परवाह नहीं करते।

लगभग 4–5 वर्ष की आयु में 'गहरी' दोस्ती का अहसास होने लगता है और वे दोस्त बनाने लगते हैं। जिन बच्चों को कोई बच्चा अपना गहरा दोस्त मानता है, उनके साथ विद्यालय में भी ज्यादा समय बिताना चाहता है। दोस्तों के प्रति बच्चे का व्यवहार तथा अपने आयु के अन्य बच्चों के प्रति व्यवहार कुछ खास तरह का हो जाता है। बाल्यावस्था के मध्य-काल में बच्चे दो या तीन के समूहों में दोस्त बना लेते है जिनका आधार रुचियों व इच्छाओं का एक जैसा होता है। ये समूह एक ही लिंग के बच्चों का होता हैं।

स्वीकृति व अस्वीकृति का जो सिलसिला प्रारंभिक और मध्य बाल्यावस्था में शुरू होता है, वह प्रौढ़ावस्था तक प्रभावित करता रहता है और प्रौढ़ावस्था के सम्बंधों के लिए जमीन तैयार करता है। किसी का सामाजिक रूप से अलग-थलग पड़ जाना – सामाजिक सम्पर्क न बना पाने के कारण बच्चे के शारीरिक व मानसिक स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। जब बच्चे विद्यालय जाने लगते हैं, तब विद्यालय के वातावरण का उन पर प्रभाव पड़ता है। उनके वहां जो सम्बंध बनते है, जो प्रतिक्रियाएं सामने आती हैं, उससे उनका सामाजिक दायरा तैयार होता है। उनके व्यक्तित्व के विकास से जुड़ी गतिविधियां, विद्यालय का वातावरण निर्मित करती हैं जिससे आने वाला सामाजिक परिवर्तन बच्चों के विकास के लिए आवश्यक है।

iii) शिक्षक – औपचारिक शिक्षा प्राथमिक विद्यालयों से शुरू होती है जो बच्चों की माता-पिता पर से निर्भरता समाप्त करती है तथा शिक्षकों एवं साथी छात्रों के सम्पर्क से सीखने की क्षमता प्रदान करती है। संज्ञानात्मक क्षमताएं बच्चों में समझने व सोचने की प्रभावी योग्यताओं का विकास करती हैं जिनके द्वारा वे

अपने अध्ययन के लक्ष्यों को पूरा करते हैं। बच्चों के सामाजिक भावनात्मक तथा संज्ञानात्मक क्षमताओं के विकास में शिक्षकों की भूमिका महत्वपूर्ण है। विद्यालयपूर्व की शिक्षा, विद्यालय जाना आरंभ करने वाले बच्चे में पर्याप्त परिवर्तन ला देती है। प्राथमिक स्तर की शिक्षा बच्चे को अनुशासित एवं ग्रहणशील बना देती है। कक्षा की बनावट, बड़ी संख्या में कक्षा में साथ-साथ पढ़ने वाले बच्चों में उल्लेखनीय परिवर्तन लाती है तथा बच्चों का शिक्षक के साथ, अंतर्व्यवहार उन्हें बहुत कुछ सीखने के अवसर को कम करता है। शिक्षक की देखरेख में बच्चे सुरक्षा का अनुभव करते है और शिक्षक के साथ खुला-व्यवहार करना तथा सम्पर्क स्थापित करने की कला सीखते हैं। बच्चों के साथ शिक्षक के स्वस्थ सम्बंध बच्चों के विकास में विशेष रूप से सहयोगी होते हैं। इससे बच्चों में अकादमिक तथा व्यावहारिक स्तर पर विकास होता है। यह बच्चों को अपनी भावनाओं पर नियंत्रण रखना सिखाता है। कक्षा में होने वाली गतिविधियां दूसरे के साथ सम्पर्क साधन तथा सीखने की प्रक्रिया में रुचि लेने के लिए प्रोत्साहन देती हैं।

iv) इंटरनेट का इस्तेमाल – सूचना एवं प्रसारण प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल से मनुष्यों के बीच सम्पर्क की शैली में परिवर्तन आया है। इस प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल ने बड़ों तथा बच्चों, सबके जीवन को बदल दिया है। सोशल मीडिया के प्रसार ने बच्चों के सामने कम उम्र में ही पूरी दुनिया खोलकर रख दी है। हाल ही में फैली कोरोना महामारी (कोविड-19) के कारण विद्यालय बंद करने पड़े और ऑनलाइन पढ़ाने की प्रक्रिया तेजी से चलन में आई। पढ़ाई करने तथा परीक्षा करने के लिए बच्चों को इंटरनेट का इस्तेमाल करना पड़ा जिससे सोशल मीडिया पर बच्चों को बाहर निकलने की मनाही की और होमवर्क भी ऑनलाइन ही करना पड़ा। कुछ समय तक लॉकडाउन की स्थिति बनी रही है जिसके कारण बच्चों की आदतों और जीवन शैलियों में भारी परिवर्तन आया है। अब बच्चे डिजीटल तकनीक पर निर्भर से हो गये है।

भारत में बड़ी संख्या में बच्चों गांवों में निवास करते है और उन्हें ऑनलाइन तकनीक की सुविधा प्राप्त नहीं हो पाई है। गरीबी तथा पिछड़ेपन के कारण बहुसंख्यक बच्चे डिजीटल तकनीक का लाभ नहीं उठा पाये हैं। जो बच्चे ऑनलाइन तकनीक से वंचित हैं, वे बहुत कुछ सीखने से वंचित रह जायेंगे और उन बच्चों की तुलना में पिछड़ जायेंगे जो इस तकनीक का इस्तेमाल कर रहे हैं। बच्चों के बीच विभाजन का यह भी एक कारण बन जायेगा।

इंटरनेट के इस्तेमाल से बच्चों की निजता प्रभावित हुई है – बच्चों की सुरक्षा, निजता तथा हितों को काफी नुकसान पहुंचा है। अनेक बच्चों को 'साइबर बुलिंग' का शिकार होना पड़ा है। जो बच्चे पहले से ही कमजोर तथा असुरक्षित थे, वे आसानी से इसके चपेट में आए हैं। बच्चों तथा वयस्कों में ऑनलाइन सुरक्षा के प्रति जागरूकता का अभाव है। ऑनलाइन सम्बंधों की विश्वसनीयता भी संदिग्ध रहती है। बच्चों में डिजीटल तकनीक के इस्तेमाल के प्रति जागरूकता लाने के साथ-साथ उनकी सुरक्षा सुनिश्चित करना भी जरूरी है।

ii) प्रतिवेश तथा सहयोगी पर्त

सिन्हा के पारिस्थितिक प्रतिमान के अनुसार प्रतिवेश तथा सहयोगी पर्त में भौगोलिक तथा भौतिक पर्यावरण और संस्थानिक घटक जैसे जाति, वर्ग तथा

समुदाय आदि से जुड़े संसाधन आते हैं। जिनका इस्तेमाल व्यक्ति अपनी हैसियत के हिसाब से करता है। ये सब बृहत-स्तरीय घटक हैं जिनमें भौतिक व सामाजिक पर्यावरण समावेशित हैं। बच्चे के विकास पर इनका अप्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है।

सामाजिक-आर्थिक कारक शिशु तथा छोटे बच्चे के पालन-पोषण को प्रभावित करते हैं। जाति व वर्ग के हिसाब से परिस्थितियाँ बदल जाती हैं जिनका प्रभाव बच्चों की परवरिश पर अनिवार्य रूप से पड़ता है। संयुक्त परिवार में सामूहिकता तथा अंत आश्रितता की संभावना एकल परिवार की तुलना में बहुत ज्यादा होती है। एकल परिवार में बच्चे आत्मपरकता व आत्मनिर्भरता के साथ रहना सीखते हैं। धर्म के प्रभाव से भी विकासात्मक शैलियों जैसे, आज्ञाकारिता, संमपर्ण, आगे बढ़ना एवं अपने निर्णय स्वं लेने की प्रवत्ति, में भिन्नता हो सकती है। समूह तथा साझेदारी की संस्कृति से व्यक्तिवादी संस्कृति में जाने वाली भारतीय माताओं पर पहले वाली संस्कृति का अधिक प्रभाव रहता है और वे अपने बच्चों को विशिष्ट विधि से आज्ञाकारिता तथा मिलकर रहना सिखाती हैं और बच्चे की भौतिक अश्रितता का सुख लेती हैं। इससे आत्मनिर्भरता की प्रवृत्ति धीरे-धीरे विकसित होती है। भारत में बच्चों के पालन-पोषण में लिंग-भेद भी देखने को मिलता है। भारतीय संस्कृति में लड़के के जन्म को लड़की की तुलना में ज्यादा महत्व दिया जाता है। इसके परिणाम स्वरूप मां, परिवार तथा पड़ोस व समुदाय सभी का रुझान लड़के के ओर अधिक रहता है। ज्ञानार्जन तथा व्यावहारिक विकास के स्तर पर देखें तो भीड़ वाले स्थल उच्च संस्कृति में पले-बढ़े बच्चों को ज्यादा पसंद होते हैं और वे उसी अनुपात में प्रभाव छोड़ने व ग्रहण करते हैं। भीड़ वाले शिक्षण संस्थानों का बच्चों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। बच्चे कम समझ पाते हैं, इसलिए उन्हें अच्छे अंक प्राप्त नहीं हो पाते और उनको स्नायु प्रणालियों का विकास देर से होता है। ऐसे बच्चों में सहकारिता की भावना कम रहती है, आश्रितता की भावना अधिक रहती है। बड़े परिवारों में पलने वाले बच्चे अपने माता-पिता के साथ गहरे सम्बंध नहीं बना पाते क्योंकि उन्हें माता-पिता के सम्पर्क में आने के अवसर कम मिल पाते हैं। इसका नतीजा यह भी होता है कि माता-पिता की भूमिका बच्चों के व्यवहार को नियंत्रित करने में प्रभावी नहीं रह जाती। घरों तथा विद्यालयों में ज्यादा भीड़ के बीच रहने के कारण कुछ बच्चों में आक्रोषित होने की प्रवृत्ति घर कर जाती है। इसके कारण ऐसे बच्चों को नियंत्रित करने के लिए दंडित भी करना पड़ता है जिसके कारण परिवार में झगड़ों व तनावों का वातावरण पैदा हो जाता है।

भीड़-भाड़ तथा तनाव भरे वातावरण में पले-बढ़े बच्चों के शरीर में विषाक्त द्रव्यों तथा प्रदूषणकारी तत्वों का प्रभाव भी पाया जाता है जिसके कारण उनके मानसिक विकास तथा सामाजिक व भावनात्मक विकास में बाधा आती है। ऐसे बच्चों का बुद्धि लब्धि कम होता है और वे ज्यादा व्यवहार कुशल नहीं होते हैं। विकासशील देशों के बच्चों के रक्त में सीसा का अनुपात ज्यादा पाया जाता है। विविध प्रकार के अनेक पर्यावरणीय व्यवधान जैसे प्रदूषित वायु, ध्वनि प्रदूषण, स्वच्छ जल का अभाव, समुचित अपशिष्ट प्रबंधन का अभाव भी बच्चे के सामाजिक और भावनात्मक विकास पर दुष्प्रभाव डालता है। इस कारण बच्चों की संज्ञानात्मक क्षमताएँ क्षतिग्रस्त हो जाती हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 3

1) कर्ट लेविन का 'जीवन-अंतराल' की अवधारणा का अर्थ है –

(अ) कारकों की उपरी और दृश्य (स्पष्ट) पर्त

(ब) व्यक्ति और उसके पर्यावरण के संभावित प्रभाव

(स) किसी व्यक्ति का तात्कालिक वातावरण का प्रभाव

(द) किसी समयावधि विशेष में व्यक्ति द्वारा अपनाया गया क्षेत्र।

2) प्रभावी शिक्षक व छात्र के बीच सम्बंध का परिणाम है –

(अ) सीखने की प्रक्रिया को सुखमय बना देते हैं।

(ब) माता-पिता के साथ सम्बंधों को घनिष्ट बना देते हैं।

(स) विद्यालय में बच्चे का मन लगने लगता है।

(द) संवेगात्मक संतुलन अधिक हो जाता है।

(i) अ तथा द (ii) अ, ब तथा स

(iii) अ, ब तथा द (iv) स तथा द

3) डायना बॉमरिंड के अनुसार पालन-पोषण के चार प्रकार कौन-कौन से हैं?

.....

.....

.....

.....

4) यह मानते हुये कि बालों का भूरा रंग प्रभावी जीन के कारण होता है तथा सुनहरे रंग अप्रभावी जीन के कारण होता है, निम्न कथनों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

i) यदि माता-पिता में से कोई एक बच्चे को भूरे रंग के जीन्स देता है तो बच्चे के बालों का रंग ———————— होगा।

ii) यदि माता-पिता दोनों से बच्चे की भूरे बालों वाले जीन्स प्राप्त होते हैं तो बच्चे के बालों का रंग ———————— होगा।

iii) यदि बच्चा मां से भूरे रंग के जीन्स प्राप्त करता है तथा पिता से सुनहरे रंग के जीन्स प्राप्त करता है तो बच्चे के बालों का रंग ———————— होगा।

iv) यदि माता-पिता दोनों बच्चे को सुनहरे रंग के जीन्स प्रदान करते हैं तो बच्चे के बालों का रंग ———————— होगा।

2.4 सारांश

हम इस इकाई के अंत में आ गए है, आइए हम उन सभी प्रमुख बिन्दुओं को याद करते है जो हमने सीखे हैं :

- मानव विकास की व्याख्या करने वाले विद्वान विकास के लिए किसी एक कारक को जिम्मेदार नहीं मानते। उनके अनुसार मनुष्य का विकास अनुवांशिकता और

पर्यावरण के बीच होता है। इन दोनों की भूमिका कहीं-कहीं लगातार देखने को मिलती है और कहीं वह लगातार दिखाई नहीं पड़ती। विकास के कुछ ऐसे पहलू होते हैं जो परिवर्तित होते रहते हैं और कुछ पहलू ऐसे हैं जो जीवन पर्यंत निरन्तर घटित होते रहते हैं।

- जीवनपर्यंत विकास में विश्वास रखने वाले मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि विकास स्थिरता के साथ लगातार होता रहता है और विकास की यह प्रक्रिया मनोवैज्ञानिक विशेषताओं के रूप में जीवन भर चलती रहती है। मनुष्य के अंदर होने वाले बदलावों तथा मनुष्य के बीच तुलनात्मक विकास मूलक बदलावों को केंद्र में रखा जाता है।
- विकास की प्रत्येक अवधि में प्रायः तीन प्रकार के परिवर्तन देखने को मिलते हैं जिन्हें विकास के आयाम कहा जा सकता है – जैविक आयाम, संज्ञानात्मक आयाम तथा सामाजिक–भावनात्मक आयाम।
- किसी भी क्षेत्र में विकास एक रेखीय नहीं होता। कभी यह तीव्र गति से होता है, कभी धीमी गति से और जीवनपर्यंत यह विकास क्रम जारी रहता है।
- जीवनपर्यंत विकास के सिद्धांत में विश्वास रखने वाले यह मानते हैं कि विकास की प्रक्रिया गुणात्मक रूप से जीवन भर चलती रहती है।
- आनुवंशिकीविदों को यह शोध करने में रुचि है कि जीवन मानव विशेषताओं को कैसे प्रसारित और परिवार के सदस्यों में कुछ जीन उभयनिष्ट कैसे होते है।
- सिन्हा के पारिस्थितिक प्रतिमान के अनुसार ऊपर की पर्त जो स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है, में घर, विद्यालयों तथा संबंधियों के साथ होने वाले अंतर्व्यवहारों के प्रभाव मौजूद रहते हैं। यह बच्चे का निकटतम पर्यावरण होता है जो बच्चे की विकास प्रक्रिया पर सीधा प्रभाव डालता है।
- सिन्हा के पारिस्थितिक प्रतिमान के अनुसार आवर्ती तथा सहयोगी पर्त के अन्तर्गत भौगोलिक तथा भौतिक पर्यावरण और संस्थानिक घटक आते हैं जैसे – जाति, वर्ग तथा समुदाय। इन सब संसाधनों का इस्तेमाल व्यक्ति समाज में अपनी सामर्थ्य के अनुसार करता है।

2.5 मुख्य शब्द

दुर्गानन्दन सिन्हा का पारिस्थितिक प्रतिमान – यह मॉडल भारतीय संदर्भ में बच्चे के विकास को समझने के लिये तैयार किया गया है। यह पर्यावरणीय प्रभावों को दो पर्तों के रूप में दखता है। (i) ऊपरी तथा स्पष्ट पर्त (ii) प्रतिवेश तथा सहायोगी पर्त।

पालन–पोषण की शैलियां – बच्चों का पालन-पोषण करने वाले माता-पिता की सोच, उनका दृष्टिकोण तथा बच्चे के साथ संपर्क स्थापित करने के उनके तरीके जिनके माध्यम से वे माता-पिता के रूप में बच्चों के प्रति अपनी भावनात्मक भूमिकायें निभाते हैं।

सायबर बुलिंग – इसे ऑनलाइन बुलिंग या बदमाशी भी कहा जाता है। जब कोई बच्चों की भावनाओं को इलैक्ट्रॉनिक माध्यम से चोट पहुँचाता है, उसका अपमान करता है अथवा उसे डराता-धमकाता है, तो इसे सायबर बुलिंग कहते है। कुछ किशोरों में

बच्चों को सताने की प्रवृत्ति होती है और वे डिजिटल प्रौद्योगिकी के माध्यम से बच्चों को तकलीफ देते हैं।

डिजिटल डिपेंडेंसी – डिजिटल प्रौद्योगिकी पर अत्यधिक निर्भरता को डिजिटल डिपेंडेंसी कहा जाता है। जब इस प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल सीमा से अधिक किया जाता है, इतना अधिक कि जीवन पर नकारात्मक प्रभाव पड़ने लगता हैं, तब इसे डिजिटल डिपेंडेंसी कहा जाता है। जैसे, सोशल मीडिया, फोन और इंटरनेट पर निर्भरता।

ऑनस्क्रीन एडिक्शन – डिजिटल प्रौद्योगिकी का इस्तेमाल जब हम इतना अधिक करने लगते हैं कि हमारी दैनिक आवश्यकताओं से संबंधित कार्य भी छूट जाते हैं, हम बिना स्क्रीन के नहीं रह पाते तब इस स्थिति को ऑन स्क्रीन एडिक्शन कहा जाता है। ऑनलाइन प्रौद्योगिकी का यह नकारात्मक इस्तेमाल है जिसके कारण व्यक्ति की कार्यक्षमता में गिरावट आती है तथा सामाजिक संबंध बिगड़ जाते हैं, स्वास्थ्य खराब हो जाता है अथवा भावनात्मक नियंत्रण में बाधा आने लगती है।

सहजवादी और अनुभववाद – सहजवादी के अनुसार दुनिया में जो कुछ भी हम सीखते हैं उसकी अंतर्निहित क्षमता है। शक्ति हमारे अंदर पहले से ही मौजूद रहती है। जबकि अनुभववादियों का यह मानना है कि मनुष्य अपने जीवन में जो कुछ भी सीखता है, अनुभवों द्वारा सीखता है।

2.6 पुनरावलोकन प्रश्न

1) मानव विकास के अध्ययन से संबंधित विषयों तथा समस्याओं का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
2) जीवनपर्यंत विकास के सिद्धांतों की व्याख्या कीजिए।
3) बच्चे के विकास पर माता-पिता, साथियों, शिक्षकों तथा इंटरनेट का क्या प्रभाव पड़ता है? समझाए।
4) सांस्कृतिक तथा भौतिक पर्यावरण बच्चे के विकास को किस प्रकार प्रभावित करते हैं।

2.7 संदर्भ एवं पढ़ने के सुझाव

Berk, L.E. (2007). Development through the Lifespan (3rd Ed.). New Delhi: Pearson Education, Inc.

Ciccarelli, S.k., & Meyer, G.E. (2008). *Psychology* (South Asian ed). Pearson.

Dalton, J.H., Elias, M.J., & Wandersman, A. (2001). *Community psychology: Linking individuals and communities*. Wadsworth Thomson Learning.

Ferguson, K. T., Cassells, R. C., MacAllister, J. W., & Evans, G. W. (2013). The physical environment and child development: An international review. *International Journal of Psychology*, *48*(4), 437-468.

https://data.unicef.org/topic/early-childhood-development/home-environment/ Accessed on 02 Jan. 21 at 13.23 hours

Lewin, K. (1939). Field theory and experiment in social psychology: Concepts and methods. *American journal of sociology*, *44*(6), 868-896.

Maldonado-Carreño, C., & Votruba-Drzal, E. (2011). Teacher–child relationships and the development of academic and behavioral skills during elementary school: A within-and between-child analysis. *Child development*, *82*(2), 601-616. Accessed on 3 January 2021 at 11.30 hours

Riffin C.A., Löckenhoff C.E. (2015) Life Span Developmental Psychology. In: Pachana N. (eds) Encyclopedia of Geropsychology. Springer, Singapore. https://doi.org/10.1007/978-981-287-080-3_107-1

Sinha, D. (2015). Psychology for India. New Delhi: Sage Publications India Pvt. Ltd.

2.8 ऑनलाइन संसाधन

Lally M. & Valentine-French, S. (2019). Lifespan Development: A Psychological Perspective- Second Edition. https://open.umn.edu/opentextbooks/textbooks/540

Baltes, P.B., Linderberger, U., & Staudinger, U.M. (2006) Life Span Theory in Developmental Psychology. Publisher: Wiley. https://www.researchgate.net/publication/236150264_Life_Span_Theory_in_Developmental_Psychology

Darling, N. (2007). Ecological Systems Theory: The Person in the Centre of the Circle. *Research in Human Development, 4*(3-4), 203-217. https://www.researchgate.net/publication/241730257_Ecological_Systems_Theory_The_Person_in_the_Center_of_the_Circles

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए के उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए – 1

1) i) सत्य
   ii) असत्य
   iii) सत्य
   iv) असत्य

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 2

i) विकास बहुआयामी होता है।

ii) विकास बहु-दिशी होता है।

iii) विकास जीवन-पर्यंत चलता रहता है।

iv) विकास संदर्भित होता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 3

1) स) किसी व्यक्ति का तात्कालिक वातावरण का प्रभाव।

2) अ, ब तथा द।

3) आधिकारिक, निरंकुश, उदार, लापरवाह।

4) i) भूरा
   ii) भूरा
   iii) भूरा
   iv) सुनहरी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 3 विकासात्मक सिद्धांत*

संरचना

3.0 प्रस्तावना

3.1 विकासात्मक सिद्धांत

3.1.1 संज्ञानात्मक विकास का दृष्टिकोण

3.1.2 भाषा विकास का सिद्धांत

3.1.3 मनोसामाजिक विकास के सिद्धांत

3.1.4 परिस्थितिकी प्रणालियों के सिद्धांत

3.2 सारांश

3.3 मुख्य शब्द

3.4 पुनरावलोकन प्रश्न

3.5 संदर्भ एवं पढ़ने के सुझाव

3.6 ऑनलाइन संसाधन

सीखने के उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आपः

- विकास के प्रमुख मनोसामाजिक सिद्धांतों का वर्णन जो बाल्यावस्था की अभिवृद्धि एवं परिवर्तनों की व्याख्या कर सकेंगे;
- बच्चों व वयस्कों में संज्ञानात्मक विकास सम्बंधी प्रमुख सिद्धांतों की प्रमुख सैद्धांतिक संरचनाएं पर चर्चा कर सकेंगे; और
- मानव विकास में पश्चिमी तथा भारतीय धारणाओं के अनुसार परिस्थितिकी परिप्रेक्ष्य की भूमिका का निर्धारण कर सकेंगे।

3.0 प्रस्तावना

मानव विकास के क्षेत्र में विशेषज्ञों का मुख्य केंद्र वे व्यावहारिक परिवर्तन हैं जो जीवनपर्यंत अवधि के दौरान विभिन्न चरणों में मनुष्यों में दिखाई पड़ते हैं। इन्हीं व्यवहारों के आधार पर व्यक्तियों के बीच विभिन्नता व समानताओं का अध्ययन किया जाता है। इसका उद्देश्य न केवल उन व्यक्तिगत परिवर्तनों का वर्णन करना है जो मनुष्यों में उत्पन्न होते है, बल्कि इस बात का भी विश्लेषण करना है कि ये परिवर्तन क्यों होते है, तथा उन तरीकों का भी पता लगाता है जिनसे ऐसे परिवर्तनों पर अधिक से अधिक नियंत्रण किया जा सके। विद्यालय मनोविज्ञान का छात्र होने के नाते यह जान लेना जरूरी है कि ये परिवर्तन विकास की प्रक्रिया के दौरान लगातार होते रहते हैं। वंशानुगतता की सतत चलाने वाली अंतरंग भूमिका के कारण तथा पर्यावरणीय शक्तियों के कारण किसी व्यक्ति के स्वास्थ्य का विकास अनेक घटकों की सक्रियता का परिणाम होता है।

* डा. ध्वनि पटेल, भूतपूर्व प्राध्यापक, महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, वड़ोदरा

विकासात्मक सिद्धांतकार तथा स्नायु विज्ञान के विशेषज्ञों के अनुसार शैशवास्था तथा बाल्यावस्था के विकास चरणों के दौरान के कुछ वर्षों का समय व्यक्ति के जीवनपर्यंत होने वाले विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विद्यालय मनोविज्ञानी की पहली महत्वपूर्ण भूमिका यह है कि बढ़ते बच्चे की विकास सम्बंधी आवश्यकताओं का पता लगाए। विकास के मुख्य लक्षणों को समझना जरूरी है जिससे विद्यालय मनोविज्ञानिक के दायित्वों का निर्वहन ठीक से किया जा सके। इससे पहले वाली इकाई में आपने विकासात्मक मनोविज्ञान की समस्याओं व सिद्धांतों के बारे में पढ़ा था तथा व्यक्तियों के अलग प्रकार के होने के पीछे वंशानुगत तथा पर्यावरणीय कारणों के विषय में जाना था। इस इकाई में आप संज्ञानात्मक तथा मनोसामाजिक विकास संबंधी विभिन्न विकासात्मक सिद्धांतों का अध्ययन करेंगे।

3.1 विकासात्मक सिद्धांत

20वीं शताब्दी के मध्य में अनेक विकासात्मक सिद्धांतों का विकास हुआ जिन्होंने मानव विकास के अध्ययन को औपचारिक विचारधारा के रूप में स्थापित किया। नीचे कुछ ऐसे सिद्धांतों का विवरण दिया गया है जो मानव–विकास की प्रक्रिया को समग्रता के साथ समझने के लिए आंशिक अथवा संपूर्णतः स्वीकार की जाती हैं।

3.1.1 संज्ञानात्मक विकास का दृष्टिकोण

संज्ञानात्मक विकास का सरोकार इस बात से है कि मनुष्य के सीखने, ज्ञान–अर्जित करने तथा अर्जित ज्ञान को दुनिया के साथ व्यवहार करने के लिए इस्तेमाल करने की पूरी प्रक्रिया क्या है। नीचे पांच महत्वपूर्ण सौद्धांतिक परिप्रेक्ष्य दिये गये हैं जो मानव–संज्ञान की प्रक्रिया को समझने में योगदान देते हैं।

I) जीन पियाजे का संज्ञानात्मक विकास सिद्धांत

संज्ञानात्मक विकास के सैद्धांतिक योगदान की व्याख्या करने का बीड़ा उठाने वाले मनोविज्ञानिक जीन पियाजे (1896–1980) थे। उन्होंने अपने तीन बच्चों की विकास प्रक्रिया का सिलसिलेवार गहराई से अध्ययन एवं निरीक्षण किया था और उसके आधार पर अपने संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत को अंतिम रूप दिया। उन्होंने देखा था कि शैशवावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक उनके बच्चों में सोचने की प्रक्रिया किस प्रकार विकसित हुई और विभिन्न चरणों में किस प्रकार पूरी हुई।

अवस्था	विकास परिदृश्य
0–2 वर्ष : संवेदी प्रेरक	• बच्चे अपनी इंद्रियों तथा गतिमान होने की क्षमता का इस्तेमाल बाहरी दुनियां के साथ सम्पर्क साधने के लिए करते हैं। • इस अवस्था के अंत तक 'वस्तुओं को देखने' और देखकर सीखने का प्रयास करते हैं और उनकी स्मृति में वे वस्तुएँ जो उन्होंने देखी हैं, सामने से हटा दिये जाने के बाद भी बनी रहती हैं। • 'सांकेतिक विचारों' में संलग्नता; इस अवस्था के अंत में बच्चा संकेतों के रूप में सोचने लगता है।

2–7 वर्ष : पूर्व–संक्रियात्मक	• विद्यालय जाने से पहले बच्चों में भाषाई योग्यता का विकास हो जाता है तथा इसका इस्तेमाल वह अपने चारों और की चीजों की वास्तविकता का पता लगाने तथा उनके सम्पर्क में आने के लिए करता है। • बच्चे खेल–खेल में सीखने लगते हैं – इसके लिए वे सांकेतिक सोच का अधिक इस्तेमाल करते हैं तथा तर्कसंगतता का इस्तेमाल कम करते हैं। • इस अवस्था में बच्चे अहंकेद्रवाद का परिचय देते हैं जो संसार को दूसरे के परिप्रेक्ष्य में देखने में असफल होते हैं। • 1) पहली अवस्था में बौद्धिकता की क्षमता कम होती है – वे किसी वस्तु को समग्रता के साथ देखने के स्थान पर उसका मात्र एक हिस्सा देखते हैं। इसे *केंद्रितता* या *सेंट्रेशन* कहा जाता है। 2) अपरिवर्तनीयता – किसी क्रिया को मानसिक स्तर पर उल्टा करके देखने की क्षमता न होने के कारण बच्चों में इस अवस्था में अपरिवर्तनीयता की प्रवृत्ति बनी रहती है। • संरक्षण के सिद्धांत का पालन न कर पाने के कारण किसी वस्तु की प्रकृति को बदल कर नहीं देख पाते। संरक्षण का सिद्धांत मनुष्य को यह जानने की क्षमता प्रदान करता है कि किसी वस्तु का आकार बदल देने से प्रकृति नहीं बदलती।
7–12 वर्ष : मूर्त संक्रियात्मक	• संरक्षण की सोच विकसित करने की क्षमता/प्राप्त करने के बाद बच्चे दूसरों के परिप्रेक्ष्यों को समझने लगते हैं तथा प्रतिवर्त्य सोचने की स्थिति प्राप्त कर लेते हैं। • तर्कसम्मत सोचने की क्षमता का विकास ही जाता है परन्तु निष्कर्ष निकालने या फैसला लेने की क्षमता अभी कम होती है। • इस अवस्था में सीमा ने रहने की स्थिति पर बच्चा अपना ध्यान केंद्रित रखता है, इसलिए जिन नियमों को वह समझ लेता है उन पर ऐसा अड़ जाता है, कि उन्हें बदलना नहीं चाहता (अपवाद को छोड़कर)।
12 वर्ष-प्रौढ़ावस्था औपचारिक संक्रियात्मक	• इस अवस्था तक सभी बच्चे नहीं पहुँच पाते। • बच्चे अमूर्त चिंतन के लिए सक्षम हो जाते हैं। • अहंकेंद्रवाद का परिचय प्रौढ़ावस्था में देते हैं। जैसा कि 1) वयस्क यह मान लेते हैं कि वे विशिष्ट हैं और उन्हें कुछ नहीं होगा। इससे उनके खतरे उठाने की उच्च प्रवृत्ति आ जाती हैं, तथा 2) काल्पनिक श्रोतागण अवस्था में यह विश्वास होने लगता है कि वे दूसरों के जीवन के केंद्र हैं जैसा कि वे अपने बारे में समझते हैं। इससे उच्च स्तरीय आत्म–चेतना आ जाती है।

II) वाइगोत्सकी के संज्ञानात्मक विकास का सामाजिक–सांस्कृतिक सिद्धांत

लेव वाइगोत्सकी (1896–1934), रूस के मनोवैज्ञानिक जिन्होंने संज्ञानात्मक विकास के सामाजिक–सांस्कृतिक सिद्धांत को जन्म दिया था, जो जीन पियाजे के सिद्धांत से अलग था। जहाँ जीन पियाजे ने संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया के दौरान बच्चे के आसपास की वस्तुओं के साथ संपर्क की बात पर जोर दिया है, वहीं वाइगोत्सकी ने बच्चे के समझदार वयस्कों तथा सम्बंधियों के साथ सामाजिक सम्पर्कों को महत्व दिया। इस सिद्धांत की दो महत्वपूर्ण धारणाएं नीचे संक्षेप में दी गई हैं।

1) बच्चों में संज्ञानात्मक विकास : ढाचांकरण के माध्यम से होता है जिसमें उच्च समझ वाला शिक्षार्थी शामिल होता है (वयस्क/सहोदर/आयु में बड़ा साथी) जो कम कुशल बच्चे को सिखाने का काम करता है। वह धीरे–धीरे सिखाने में देने वाले सहयोग को कम करता जाता है और कम कुशल बच्चा उन कामों को बिना सहयोग स्वयं करने की आदत डालता चलता है।

2) प्रत्येक बच्चे की विकास की अवधि में समीपस्थ विकास का क्षेत्र (Zone of Proximal Development) होता है। बच्चे के वास्तविक विकास के स्तर, जब वह अपनी समस्याएँ स्वयं सुलझाने में सक्षम हो जाता है, और उच्च स्तरीय विकास जब वह वयस्कों अथवा अपने से आयु में बड़े साथियों को सहयोग करने की क्षमता पर जाता है – इन दोनों के बीच की स्थिति को समीपस्थ विकास का क्षेत्र कहा जाता है। सुरागों, प्रोत्साहन के शब्दों, मॉडलिंग, समझाने तथा प्रयास करने के कौशल में दक्ष वयस्क, बच्चो का सहयोग करते हैं और उसे उस स्थिति से ऊपर लाने का प्रयास करते हैं, जहाँ बच्चे को सहायता की आवश्यकता होती है।

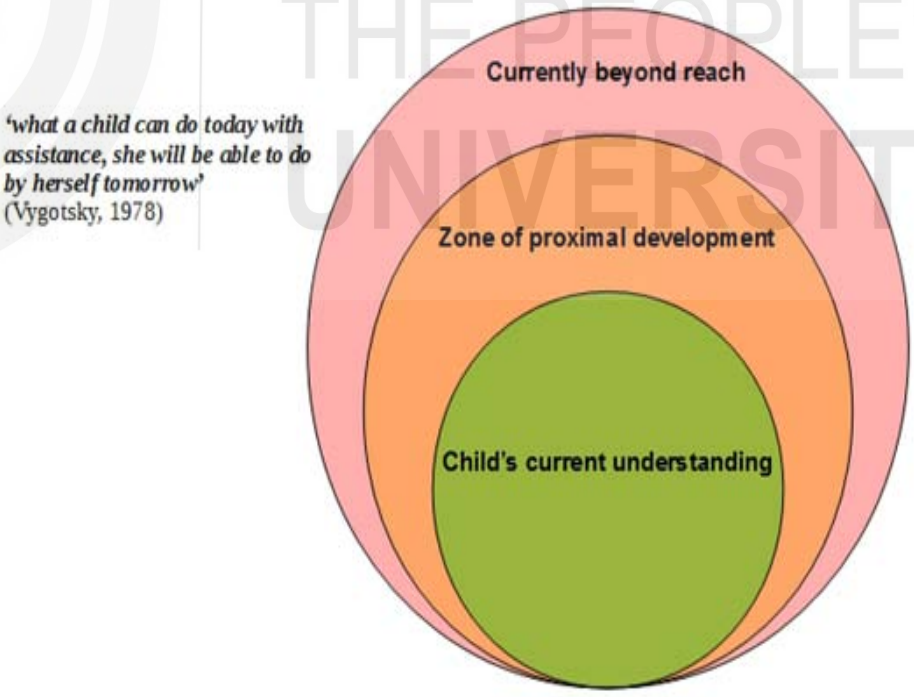

चित्र 3.1: वाइगोत्सकी की समीपस्थ विकास के क्षेत्र की अवधारणा

स्रोत: Cognitive development: The Science of Childcare (firstdiscoverers.co.uk)

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 1

1) उदाहरण को सावधानी से पढ़िए तथा नीचे बाक्स में दिये गये शब्दों की सहायता से उनमें से प्रत्येक को खाली स्थान में भरिए।

व्यक्तिगत, समीपस्थ विकास का क्षेत्र, केंद्रीयता, अहंकेंद्रवाद

i) दर्श ग्रेड चार की गणित की समस्याओं का स्वयं हल निकाल सकता है, परन्तु अपने गणित शिक्षक की सहायता से वह ग्रेड 6 की गणित समस्याओं का भी हल निकाल सकता है ————————————।

ii) 4 साल की धिया अपनी दादी को टेडी उपहार – स्वरूप देना चाहती थी, बताइये वह और क्या–क्या करना चाह सकती है? ————————————

iii) नन्ही सुहानी इस बात से परेशान है कि उसे उसकी बड़ी बहन नन्दिनी की तुलना में केक का छोटा टुकड़ा का हिस्सा मिला। जब उसकी मां ने सुहानी का केक दो हिस्सों में काट दिया तो सुहानी यह सोचकर बहुत खुश हुई कि उसके पास केक के दो टुकड़े हैं, जबकि उसकी बड़ी बहिन सुहानी के पास केवल एक ही है ——————————।

iv) जब निक्की सोचता है कि वह विशेष है और कुछ भी गलत नहीं हो सकता है, उसे भले ही वह नशे में गाड़ी चला रहा हो .....।

2) समीपस्थ विकास के क्षेत्र की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

III) ब्रूनर की ज्ञान–अर्जन की अवधारणा

जेरोम ब्रूनर (ज.–1915) अमरीकी विकासात्मक मनोवैज्ञानिक जिसने वाइगोत्सकी के विचारों को पश्चिमी विद्वानों के बीच पहुंचाया। उन्होंने पियाजे के अनेक विचारो के लिए और उन्हें वाइगोत्सकी के सिद्धांतों के साथ मिलाकर ज्ञानार्जन के तीन रूप विकसित किए – (i) *निक्रियता प्रतिनिधित्व* (ज्ञान आधारित निष्क्रियता अथवा जानने कि चीजें कैसे की जाये), (ii) *सांकेतिक ज्ञान* (दृश्य आकृतियों के अंकन के माध्यम से प्रतिनिधित्व परक ज्ञान पर आधारित) तथा (iii) अंत में *दृश्य प्रतिमान* (भाषा पर आधारित तथा संस्कृति द्वारा संक्रमित) ज्ञान के ये रूप आंशिक रूप से आच्छदित है। उदाहरण के लिए सर्फिंग का खेल सीखते समय अन्य मामलों से पूरी तरह ध्यान हटा लेना जरूरी है। यदि कोई उस समय साथ–साथ किताब पढ़ते रहने की जिद करे तो वह पानी की सतर पर होने वाले सर्फिंग के खेल को नहीं सीख पायेगा। दूसरी ओर, एक बार यदि कोई सर्फिंग के खेल में दक्ष हो जाय तो वह समुद्र की कल्पना करके, नदी या मानव उत्पन्न लहरों की कल्पना करके तथा जल के तल पर फिसलते हुए तथा प्रदर्शन की मौलिक कल्पना करते हुए सर्फिंग की कला में सुधार कर सकता है।

VI) सूचना प्रसंस्करण सिद्धांत

यह एक स्मृति आधारित सिद्धांत हे जो सूचना प्राप्त करने, उसे संग्रहीत करने की अवधि से संबंधित है। ध्यान देने की प्रक्रियाएँ, सूचनाओं को सम्हालने तथा उनके विस्तारात्मक अभ्यास आदि कुछ ऐसे तरीके हैं जो सूचना ग्रहण करने, उसे अल्पकालिक स्मृति (Short Term Memory) में रखने तथा दीर्घकालिक स्मृति (Long Term Memory) में रखने के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। शिशुओं की स्मृति क्षमता तथा परिचित व अपरिचित की पहचान करने की क्षमता 5–6 महीने की आयु तक विकसित हो जाती है। विद्यालय जाना आरंभ करने से पहले ही बच्चे स्मृति की संरचना के लिए भाषा का इस्तेमाल करने की क्षमता विकसित कर लेते हैं। परन्तु इस आयु के बच्चे अल्पकालिक या दीर्घकालिक स्मृति से सूचना प्राप्त करने की विधि के बारे में कुछ नहीं जानते। परन्तु वे व्यक्तिगत घटनाओं पर आधारित घटनाजन्य स्मृति को धारणा करने की क्षमता विद्यालय जाने की आयु से पहले ही प्राप्त कर लेते हैं। साइकिल चलाने सीखने जैसी विधि प्रक्रियामूलक स्मृति को भी सम्हाल कर रखना सीख जाते हैं। मध्य बाल्यावस्था की अवधि में बच्चे यह समझने लगते हैं कि उनकी स्मृतियाँ कैसे काम करती हैं, जिसे 'मेटामेमोरी' (Metamemory) कहते हैं। जब उन्हें अनेक सूचनाएँ एक साथ प्राप्त होती है, वे ऐसे तरीके विकसित कर लेते हैं जो सूचनाओं को संग्रहीत करने तथा स्मृति भण्डार में सूचनाओं को व्यवस्थित रूप से सम्हाल कर रखने में मदद करते हैं। भाषा विकास के कारण यह संभव हो पाता है।

V) नैतिक विकास पर कोहल्बर्ग का दृष्टिकोण

प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक पियाजे के बच्चों पर किये गये अनुसंधान से प्रभावित होकर अमरीकी मनोविज्ञानी **लॉरेंस कोहल्बर्ग** (1927–1987) ने अपने नैतिक विकास के सिद्धांत का निर्माण किया। कोहल्बर्ग का नैतिकता के विकास का सिद्धांत पियाजे के दो चरणों वाले नैतिक–निर्णय के सिद्धांत से अधिक अग्रवर्ती था। वह पियाजे के छोटे बच्चों की नैतिक दुविधा की स्थिरता तथा बड़े बच्चों की आपेक्षता से अलग हटकर था। आइए हम कोहल्बर्ग के अनुसार विभिन्न आयु अवस्थाओं में नैतिक विकास को देखें।

	नैतिक विकास की अवस्थाएं
स्तर I **प्राक्‌रूढ़िगत** **नैतिकता**	***स्तर I आज्ञाकारी और दंड अवस्थाएं*** इस विकास के पहले चरण में अनुशासन एवं दंड की समझ आ जाती है। वयस्कों से दिशानिर्देश प्राप्त कर वह अपनी नैतिक दुविधाओं को हल कर लेता है। अनुशासन में रहना, नियमों व निर्देशों का पालन करने के पीछे दंडित होने का अहसास काम करता है। नैतिकता बाहर से थोपी हुई चीज लगती है। ***स्तर II व्यक्तिवाद एव अदला–बदली*** एक से अधिक सही मत की संभावना होने पर बच्चों को लगने लगता है, फिर भी दंडित होने से बचे रहने की मानसिकता प्रबल रहती है। पारस्परिकता की सोच का विकास होता है – 'दूसरों को हम जैसे करेंगे, वैसा ही हमारे साथ होगा' इस सोच में विश्वास बन जाता है।

स्तर II **किशोरावस्था पारंपरिक**	***स्तर III*** *अच्छे पारस्परिक संबंध* किशोरावस्था तथा समुदाय के प्रति दायित्वों का निर्वाह करने तथा उनके हितों के लिए अच्छे काम करने की नैतिकता विकसित होने लगती है। ***स्तर IV सामाजिक व्यवस्था बनाए रखना*** इस अवस्था में बच्चा समाज से सीधा जुड़ जाता है, और अब वह विभिन्न स्तरीय सत्ताओं के नियमों का पालन करना तथा सामाजिक नियमों का पालन करना सीख जाता है।
स्तर III **उत्तरर्रारूढ़िगत**	***स्तर V–सामाजिक अंतर एवं व्यक्तिगत अधिकार*** इस अवस्था में मौलिक मानवाधिकारों तथा लोकतांत्रिक विशेषाधिकारों की समय विकसित हो जाती है और ये सब सोच के केंद्र में आ जाते हैं। व्यक्ति अपने समाज की अच्छाइयों– बुराईयों का विश्लेषण व मूल्यांकन करने लगता है। ***स्तर VI सार्वभौमिक सिद्धांत*** इस अवस्था में व्यक्ति मानव मूल्यों को महत्व देता है। समानता, न्याय, गरिमा व सम्मान उसकी सोच के केंद्र में आ जाते हे, वह सही और गलत के आधार पर अपनी नैतिकता तय करने लगता है।

केरॉल गिलिगन, 1960 के दशक में सामाजिक मनोवैज्ञानिक ने सुप्रसिद्ध मनोविज्ञानिक, ऐरिक ऐरिक्सन के साथ काम किया था। बाद में वह कोहल्बर्ग की अनुसंधान सहयोगी बनी। उनका विश्वास था कि कोहल्बर्ग का नैतिकता का सिद्धांत पुरुषों को प्रमुखता प्रदान करने वाला था क्योंकि कोहल्बर्ग के अधिकतर अनुसंधान विषयों के केंद्र में पुरुष ही होते थे। गिलिगन मानती थीं कि पुरूषों तथा स्त्रियों की नैतिकताओं के दायरे तथा मनोवैज्ञानिक रुझान अलग–अलग होते हैं। पुरुष कानून व न्याय पर अधिक जोर देते हैं तथा स्त्रियां देखभाल से जुड़े दायित्वों तथा सम्बंधों पर अधिक जोर देती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो, स्त्री यह मानती है कि वह पुरुषों से भिन्न तो है, परन्तु कमतर नहीं है। स्त्रियों के कार्य न्याय संगत नैतिकता पर उतने आधारित नहीं होते जितने देखभाल सम्बंधी नैतिकता पर आधारित होते हैं।

गिलिगन ने अपना सिद्धांत पूर्व पारंपरिक, पारंपरिक, उत्तर पारंपरिक विकासावस्थाओं को केंद्र में रखते हुए दिया हैं, जहाँ स्वार्थपरक चरण से सामाजिक स्तर तक सैद्धांतिक नैतिकता में परिवर्तन होते रहते हैं। गिलिगन जोर देकर कहती है कि एक अवस्था से दूसरे अवस्था तक पहुँचना संज्ञानात्मक क्षमताओं के कारण नहीं होता है जैसा कि कोहल्बर्ग तथा पियाजे मानते हैं, अपितु स्वयं के बारे में सोच में आये परिवर्तन के कारण होते हैं। केरॉल गिलिगन का विकासात्मक मनोविज्ञान के क्षेत्र में कार्य अभूतपूर्व था, क्योंकि उन्होंने व्यक्तिगत तथा सामाजिक परिवेश के आधार पर लिए जाने वाले नैतिक निर्णयों के महत्व को आगे बढ़ाया और जब बात स्वयं की आती है तो वह पुरुष भी हो सकता है, अथवा स्त्री भी हो सकती है।

3.1.2 भाषा विकास का सिद्धांत

बच्चों में किसी भाषा को जीवन के आरंभिक दिनों में तीव्र गति से सीखने की अद्‌भुत क्षमता होती है। भारत एक बहु भाषा–भाषी देश है तथा अनेक प्रकार की बोलियों के बीच सामंजस्य बैठाने की चुनौतियों का सामना रहा है। भारत में द्विभाषिता तथा बहुभाषिता भारत की पहचान बन चुकी है। शिक्षा में भाषाओं को पढ़ाये जाने से सम्बंधित नीतियाँ प्रमुख तथा कम बोली जाने वाली भाषाओं के बीच श्रेणी बद्धता के आधार पर तय की जाती हैं – इससे दुहरे विभाजन की स्थिति उत्पन्न हो जाती है – (i) अंग्रेजी तथा प्रमुख क्षेत्रीय भाषा तथा (ii) प्रमुख क्षेत्रीय भाषाओं और स्थानीय जन–जातीय अल्पसंख्यक की भाषाओं के बीच। यूनेस्को ने भारत में 197 ऐसी भाषाओं को चिन्हित किया है जो कमजोर स्थिति में हैं, इनका अस्तित्व खतरे में है और ये विलुप्त होने के कगार पर हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में इस मामले की अत्यावश्यकता को रेखांकित किया गया है तथा इसे केंद्र में रखकर मातृभाषा/क्षेत्रीय भाषा को शिक्षा का माध्यम ग्रेड V तथा अधिमानतः ग्रेड VIII तक बनाने की सिफारिश की गई है।

अ) **बी.एफ. स्किनर द्वारा योगदान** – बरहम फ्रेड्रिक स्किनर (1904–1990) – अमरीकी मनोवैज्ञानिक तथा व्यवहारवादी थे जिनका विश्वास था कि भाषा का विकास क्रियाप्रसूत अनुबंधन सिद्धांत के अनुसार हुआ है। दूसरों की नकल करने, सक्रियता, संकेतों तथा लाभकारी तंत्र बच्चों को भाषा सीखने में सदा सहयोग देते रहे हैं। उदाहरण के लिए जब–जब माँ, दूध से भरा गिलास लेकर बच्चे के पास पहुँचती है, तब बच्चा देखता है, मुँह से खास ध्वनियाँ पैदा करता है और दूध के गिलास का अर्थ समझने का प्रयास करता है। जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता जाता है, मां बच्चे को 'दूध' शब्द का उच्चारण करना सिखाती जाती है और जो वह इस शब्द का उच्चारण करना सीख जाता है और पहेली बार 'दूध' कहता है तो मां मुस्कराती है और गिलास (पुरस्कार) को लाभकारी वस्तु के रूप में उसे दे देती है। यह क्रम तब तक जारी रहता है जब बच्चा सही शब्दों का उच्चारण कर, दूध प्राप्त करने की अपनी आवश्यकता को प्रकट करना नहीं सीख जाता। स्किनर के भाषाई विकास में शामिल हैं : (i) अभिप्रेरित क्रिया (ii) भेद करने वाली उत्तेजना (iii) प्रतिक्रिया (iv) आकृतिकरण।

ब) **नाओम चोमस्की का योगदान** – नाओम चोमस्की अमरीकी भाषाशास्त्री थे। उन्होंने स्किनर के सिद्धांत का विरोध किया और बताया कि बच्चे भाषा सीखने की योग्यता सहज रूप से सरलता से प्राप्त करते हैं – भाषा सीखने की जटिल प्रणाली मनुष्य के मस्तिष्क में मौजूद रहती है। इसे **भाषा अर्जन उपकरण** (Language Acquisition Device) कहा जाता है। चोमस्की ने आगे कहा है कि सार्वभौमिक व्याकरण की अवधारणा बताती है कि सभी भाषाओं के व्याकरण की संरचना तथा नियम एक जैसे ही है।

शैशवावस्था तथा बाल्यावस्था में भाषा तथा संचार विकास प्रणाली के विकास की अवस्थाएं

भाषा के विकास के अनेक चरण होते हैं। संस्कृति विशेष का होने से विकास की यह प्रक्रिया प्रभावित अथवा बाधित नहीं होती। इन विकास मूलक परिवर्तनों के निरीक्षण से पता लगता है कि विभिन्न आयु–अवस्थाओं में ये परावर्तन अलग–अलग होते हैं।

अनुमानित आयु–अवस्था	अवलोकन बिन्दु
शिशु काल	शिशु प्रायः शारीरिक हाव–भावों के माध्यम से तथा रोने की आवाज़ें निकालकर सम्पर्क स्थापित करते हैं। शिशुओं की देखभाल करने वाले लोग बच्चों की उन आवाजों को अलग–अलग समझने में सक्षम होते है जिन्हें शिशु भूख अथवा परेशानी की स्थितियों में उत्पन्न करते हैं।
आरंभिक कुछ महीनों में दिखाई पड़ने वाले परिवर्तन	स्वरोच्चारण– बच्चे शिशु अवस्था में गले से आरंभ में स्वर उत्पन्न करते है, जैसे ऊ ... ऊ ... ऊ की आवाज अथवा आ .... आ ... आ की आवाज
6 तथा 9 महीनों के बीच	विद्यालय जाने की अवस्था से पहले की आरंभिक स्वर व व्यंजनमूलक आवाजें – इस अवस्था में बच्चे स्वरों के साथ–साथ कुछ सीमित व्यंजनों का उच्चारण भी करने लगते हैं, जैसे – 'मामामामा', 'दादा-दादा' तथा इन आवाजों को वे दुहराते रहते हैं। धीरे–धीरे बच्चे अन्य लोगों के बीच होने वाली बातचीत को समझने लगते हैं। इस अवस्था में उनकी समझने की क्षमता अभिव्यक्ति की क्षमता की तलुना में अधिक होती है।
लगभग 10 महीने की आयु में	शिशु उस बातचीत को समझना प्रारंभ कर देता है जिसमें वयस्क संलग्न रहते है, समझते ज्यादा है, बोलते कम है।
12–13 महीने की आयु में	आंशिक शब्दीय भाषा – बच्चे अपनी जरूरतों को अभिव्यक्त करने के लिए आंशिक शब्दों का उच्चारण करते हैं और उसके माध्यम से अपने कथन का आशय समझाने का प्रयास करते हैं, जैसे 'पानी' के लिए '*आनी* अथवा '*पा*'। अभिभावक अधूरे शब्दों का आशय समझ लेते हैं। एक वर्ष की आयु तक पहुँचते–पहुँचते बच्चों के भाषा–ज्ञान में काफी विकास हो जाता है जिसे नामकरण बाहुल्य के नाम से जाना जाता है और वह अनेक नामों से सम्बंधित 200 से अधिक शब्दों का उच्चारण करना सीख जाता है।
15–18 महीने की आयु में	टेलीग्राफ भाषा – बच्चे छोटे–छोटे वाक्य बताना सीख जाते हैं जो संज्ञा तथा क्रिया से मिलकर बनते हैं – जैसे 'मामा जा' 'डॉगी शू'।
विद्यालय पूर्व वर्ष	इस क्रम में बच्चे नये–नये शब्द सीखते रहते हैं तथा व्याकरण के नियमों का पालन करना भी सीखने लगते हैं, और इस प्रकार विकास करते–करते बच्चे प्रायः 6 वर्ष अवस्था तक तीव्र गति के साथ अपनी भाषा में बोलना शुरू कर देते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 2

1) भाषा–विकास के संबंध में चोमस्की और स्किनर के सिद्धांतों में क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) केरॉल गिलिगन के नैतिक विकास पर किया गया कार्य पियाजे तथा कोहल्बर्ग से किस प्रकार अलग है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) उपयुक्त आयु–वर्ग से नीचे दिये गये भाषा–विकासों का मिलान कीजिए।

अ) आंशिक शब्दीय भाषा	i) 15 से 18 वर्ष की अवस्था में।
ब) स्वर व व्यंजन मूलक ध्वनियाँ,	ii) 10 माह तक की अवस्था में
स) टेलीग्राफ–भाषा	iii) 12–13 महीने की अवस्था में।
द) ''शिशु समझते ज्यादा है; बोलते कम हैं''	iv) 6–9 महीने की अवस्था में।

I. अ (iv), ब (iii), स (ii), द (i)

II. अ (iii), ब (iv), स (i), द (ii)

III.अ (iii), ब (ii), स (iv), द (i)

IV. अ (i), ब (ii), स (iii), द (iv)

4) प्रभावी शिक्षक बाल संबंध का परिणाम है –

अ) अधिगम प्रक्रिया में आंनद

ब) माता–पिता के साथ करीबी बंधन

स) विद्यालय में बेहतर समायोजन

द) संवेगों का प्रभावी नियमन

5) निम्नलिखित कथन कोहल्बर्ग के विकासात्मक सिद्धांत की एक अवस्था का वर्णन करते हैं। प्रत्येक कथन के साथ विकास की सही अवस्था लिखिए।

i) जब नैतिकता कानूनों का पालन करने तथा सत्ताओं का सम्मान करने पर आधारित होती है ————————————।

ii) जब नैतिकता परिवार तथा समुदाय के प्रति अच्छे काम करने पर आधारित होती है ————————————।

iii) जब नैतिकता क्या सही है, पर आधारित होती है ————————।

iv) जब नैतिकता मौलिक मानवाधिकारों तथा लोकतांत्रिक विशिष्टताओं पर आधारित होती है ————————।

v) जब नैतिकता वयस्कों के आदेशों का पालन करने अथवा दंडित किये जाने के भय पर आधारित होती है ————————————।

3.1.3 मनोसामाजिक विकास के सिद्धांत

I) ऐरिक ऐरिक्सन की विकास की मनोवैज्ञानिक अवस्थाएं

सिगंमड़ फ्रायड के मनोवैज्ञानिक विकास के सिद्धांत के आधार पर **ऐरिक ऐरिक्सन** (1994) ने 1950 में शैशवावस्था से वृद्धावस्था तक बने रहने वाले सामाजिक गतिविज्ञान के प्रभावों की व्याख्या करने के लिए मनोवैज्ञानिक विकास के सिद्धांत का आविष्कार किया। फ्रायड के मनोविश्लेषण में प्रशिक्षण प्राप्त करने के बाद, ऐरिक्सन को यह विश्वास हो गया था कि विकास की प्रक्रिया में, लैंगिक विकास की तुलना में सामाजिक सम्पर्क ज्यादा महत्वपूर्ण हैं। उसके आठ अवस्थाओं के सिद्धांत में मनोवैज्ञानिक विकास की अवस्थाएँ सम्मिलित हैं। इस अनुच्छेद में पहली 5 अवस्थाओं का वर्णन किया जायेगा जो शैशवावस्था से प्रौढ़ावस्था तक मौजूद रहती है।

ऐरिक्सन का विश्वास था कि हर विकासावस्था विकास से जुड़ी समस्या लेकर आती है। व्यक्ति इस समस्या को नियंत्रित करने में सफल होता है या फिर असफल रहता है। समस्या से सफलतापूर्वक निपटना स्वास्थ्य प्रद व सकारात्मक विकास का आधार बनता है। अगली अवस्थाओं में विकास इस बात पर निर्भर करता है कि पिछली हर अवस्था में विकास से जुड़ी समस्या से कैसे निबटा गया है।

ऐरिक्सन की बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के मनोवैज्ञानिक चरण

स्तर	विकासात्मक संकट	संकट का सफलतापूर्वक निपटान	संकट का असफलतापूर्वक निपटान
शैशवावस्था	विश्वास बनाम अविश्वास	जब शैशवावस्था में व्यक्ति की विकास से जुड़ी आवश्यकताएँ पूरी की जाती हैं तो व्यक्ति में विश्वास का भावना का विकास होता है और दुनियां अच्छी लगती है।	शिशु को बार–बार झिड़कने, कुछ भी करने से रोकने से उसमें अपने ऊपर विश्वास करने का भाव उत्पन्न नहीं हो पाता।
बाल्यावस्था	स्वयत्ता बनाम लज्जा तथा शंका	आवश्यकता इस बात की है कि अभिभावक या माता–पिता बच्चे	यदि बच्चे को स्वतंत्रता पूर्वक अपनी दिशा स्वयं चुनने के अवसर नहीं दिये

		को स्वतंत्रतापूर्वक व्यवहार करने दें जिससे उसमें स्वायत्ता की भावना का विकास हो सके।	जाते हैं, तो बच्चे के अंदर एक तरह की शर्म तथा संदेह जन्म ले लेता है।
विद्यालय पूर्व अवस्था	पहल शक्ति बनाम अपराध भावना	यदि बच्चों में जिम्मेदारी का भावना का विकास होता है तो उनमें पहल करने की हिम्मत आ जाती है।	यदि बच्चे जिम्मेदारी का भावना विकसित नहीं कर पाते, तो उनमें कुंठा जन्म ले लेती है।
विद्यालय अवस्था	परिश्रम बनाम हीनता	बच्चा जब अपने आपको सक्षम अनुभव करता है तो उसके अंदर नये–नये कौशलों का विकास होता है, आत्म–प्रतिष्ठा के अनुपात में वृद्धि होती है।	नये कौशलों का विकास न कर पाने पर बच्चों में हीनता की भावना घट कर जाती है।
किशोरावस्था	पहचान बनाम भूमिका सम्भ्रान्ति	खुलकर अपनी भूमिकाएँ निभाने के अवसर प्राप्त करने पर तथा अपने लिए भूमिकाओं का चयन स्वयं करने में सफलता प्राप्त कर लेने पर बच्चों में अपनी पहचान बनाने के हौंसले का विकास होता है।	अपनी पहचान बनाने में असफल रह जाने पर भ्रम तथा निराशा की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

II) सामाजिक अधिगम का सिद्धांत

कनाडा–अमेरिका के मनोवैज्ञानिक **अलबर्ट बैण्डुरा** (जन्म–1925) ने सामाजिक अधिगम के सिद्धांत को प्रस्तावित किया जो यह बतात है कि सामाजिक व्यवहार दूसरों के व्यवहार को देखने तथा उसकी नकल करने से अभिग्रहीत किया जाता है। सामान्यतः चार तरीके हैं जो नये व्यवहार सीखने के लिए अपनाये जाने जरूरी हैं। ये हैं –

i) **ध्यान देना** – व्यवहार को ध्यानपूर्वक देखा जाय जिससे वह व्यापक रूप से या गहराई से अभिप्रेरित कर सके।

ii) **धारण करना** – जिस व्यवहार को ध्यानपूर्वक गहराई से देखा गया है, उसे स्मृति में उतार लेना और धारण किए रहना।

iii) **पुनरोत्पादन** – व्यवहार करने के लिए यह जरूरी है कि व्यक्ति में व्यवहार के पुनरोत्पादन का कौशल या हुनर हो।

iv) **प्रोत्साहित करना** – बांडुरा द्वारा इसे 'प्रबल प्रेक्षण' की संज्ञा भी दी गई है। इसका अर्थ यह है कि कोई व्यक्ति किसी व्यवहार को अपने अंदर तब ही उतारता है जब वह इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि यह व्यवहार उसके लिए लाभकारी होगा।

III) संबंधन (आसक्ति) का सिद्धांत

ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध मनोविज्ञानिक, **जॉन बॉल्बी** (1907) ने 1940 में इस सिद्धांत का आविष्कार किया, बाद में **मैरी आंइसवर्थ** ने इस पर परीक्षण किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँची कि जिन बच्चों को अत्यधिक आधारभूत सामाजिक, संवेगात्मक तथा बौद्धिक भूमिकाएं निभाने से रोका जाता है, वे वयस्क के रूप में विकसित होने पर सम्बंधों में अक्षमता का अनुभव करते हैं। उन्होंने यह तर्क दिया कि बच्चे संबंधन व्यवहार प्रणाली के साथ जन्म लेते हैं जो उन्हें संबंधन के स्रोत की ओर ले जाती है। जो उन्हें अच्छा लगता है या आत्मीयता देता, वे उसकी ओर खिंचते चले जाते हैं। संबंधन व्यवहार प्रणाली निम्न रूपों में कार्य करती है–

i) निकटता या आत्मीयता की खोज – उसके निकट जाना बच्चे की आवश्यकता होती है जो उसे आत्मीयता देता है, विशेष रूप से उस समय जब बच्चों में तनाव होता है।

ii) सुरक्षात्मक आधार – आत्मीयता देने वाले व्यक्ति के निकट पहुँचने पर बच्चा सुरक्षित अनुभव करता है।

iii) अलगाव-जिसका साथ बच्चे को अच्छा लग रहा है, यदि उससे बच्चे को दूर किया जाय तो वह प्रतिरोध करता है। छः माह की अवस्था से संबंधन प्रणाली बच्चे को उन लोगों के प्रति आकर्षित करने लगती है जो उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। जो लोग बच्चे के लिए अपने लगने लगते हैं, उनसे यदि वे भरपूर संरक्षण व सहयोग प्राप्त करते हैं तो उनके अंदर सकारात्मक सोच की सुदृढ़ प्रणाली विकसित होने लगती है और जिन बच्चों की उपेक्षा की जाती है उनमें यह प्रणाली अच्छी तरह विकसित नहीं हो पाती। प्रभावित विनियमन रणनीतियों का उपयोग करके उपेक्षित बच्चे संकट का सामना करते हैं :

   i) अतिसक्रियता रणनीतियाँ – भावात्मक रूप से निर्भर या किसी चीज को पकड़ने में जल्दी करतें हैं, प्रतिरोधी व्यवहार करते देखे जाते हैं।

   ii) निष्क्रियता रणनीतियाँ – वे अपने आपको, अपनी भावनाओं को दबाते हैं तथा किसी से मिलना नहीं चाहते।

IV) लैंगिक भूमिका विकास सिद्धांत

सीखने की तथा संज्ञानात्मक प्रक्रियाएं लैंगिक भूमिकाओं के विकास की संभावनाएं तय करते हैं तथा लैंगिक भूमिकाओं की पहचान निर्धारित करते हैं। बांडुरा का सामाजिक अधिगम सिद्धांत आरंभिक वर्षों में लैंगिक भूमिका गठन के विकास में बड़ा योगदान है। बच्चे अपने माता–पिता तथा अन्य वयस्कों को विभिन्न प्रकार के व्यवहार करते हुए देखते हैं और समान लिंग वाले माता–पिता के व्यवहार का अनुकरण करते हैं। उपयुक्त व्यवहार की सकारात्मकता पुनर्बलन के साथ नकल करने से और उस व्यवहार को स्वयं करके दिखाने से उसी तरह के व्यवहार की आदत पड़ जाती है।

उन–उपयुक्त व्यवहार की नकल करने से नकारात्मक क्षमताएं बढ़ती है और व्यक्ति उसी तरह का व्यवहार करना ठीक से नहीं सीख पाता।

सांद्रा बेम (1981) की 'जेंडर स्कीमा 'सिद्वांत' संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं के साथ मिलकर सामाजिक अधिगम के सिद्धांत को एकीकृत करती है। बच्चा अपनी बढ़ती अवस्था में 'पुरुष' तथा 'स्त्री' के व्यवहारों का मिला–जिला रूप प्रदर्शित करता है। वह लड़कों तथा लड़कियों को देखता है तथा उनसे सूचनाएँ ग्रहण करके उन्हें व्यवस्थित करता है तथा उनका वर्गीकरण करके 'लड़के का स्कीमा' तथा 'लड़की का स्कीमा' तैयार करता है फिर लड़का ही लड़के के अनुरूप व्यवहार और लड़की है तो लड़की के अनुरूप व्यवहार करता है और इससे अपनी लैंगिक पहचान विकसित होती है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 3

1) निम्नलिखित विकासात्मक समस्याओं का ऐरिक्सन की मनोवैज्ञानिक विकास अवस्थाओं के अनुसार उपयुक्त आयु–अवधियों से मिलान कीजिए।

अ) विश्वास बनाम अविश्वास	i) विद्यालय पूर्व अवस्था
ब) पहल बनाम अपराध भावना	ii) आरंभिक विद्यालय अवस्था
स) स्वायत्तता बनाम लज्जा तथा शंका	iii) बाल्यावस्था
द) परिश्रम बनाम हीनता	iv) शैशवावस्था

I- अ (i), ब (ii), स (iii), द (iv)
II. अ (iv), ब (ii), स (iii), द (i)
III. अ (iv), ब (i), स (iii), द (ii)
IV. अ (ii), ब (iv), स (i), द (iii)

2) निम्नलिखित में से कौन सा कथन बॉल्बी के संबंधन सिद्धांत के अनुसार सत्य है?

i) बच्चे बाल्यावस्था में आत्मीयता स्थापित करना सीखते हैं (सत्य/असत्य)।

ii) संबंधन प्रणाली के कारण बच्चे की आवश्यकता पूर्ति करने वाले आत्मीय जन बच्चे के आकर्षण का केंद्र बन जाते हैं (सत्य/असत्य)।

iii) उपेक्षित बच्चे अपना तथा दूसरों का सकारात्मक कार्य प्रतिमान विकसित करना सीख जाते हैं (सत्य/असत्य)।

iv) जिन बच्चों की आधारभूत सामाजिक तथा भावात्मक आवश्यकताएं पूरी नहीं हो पाती, वे वयस्कों के साथ सम्बंध स्थापित करने की क्षमता विकसित नहीं कर पाते (सत्य/असत्य)।

3.1.4 परिस्थितिकी प्रणाली सिद्धांत

परिस्थितिकी की परिभाषा जीवधारियों की भौतिक पर्यावरण के सम्बंधों को केंद्र में रखकर की गई है। पारिस्थितिक परिप्रेक्ष्य व्यक्तियों के भौतिक व सामाजिक सांस्कृतिक संदर्भों के साथ संबंध व संपर्क कैसे हैं और कैसे होने चाहिए। उदाहरण के लिए बात केवल संतुलन बैठाने तथा मनुष्य के व्यक्तित्व पर विचार करने की नहीं है, अपितु यह भी देखना है कि मनुष्य की अपने पर्यावरण के साथ लेन–देन प्रक्रिया किस प्रकार की है, अर्थात पर्यावरणीय संसाधनों का उपयोग मनुष्य कितनी समझदारी के साथ कर रहा है।

उरी ई ब्रानफेनब्रेनर का परिस्थितिकी सिद्धांत

परिस्थितिकी प्रणाली के सिद्धांत पर 1979 में किया गया। उरी ब्रानफेनब्रेनर का शोध कार्य यह बताता है कि मानव विकास में पर्यावरणीय प्रणाली की क्या भूमिका है। उनका सिद्धांत बच्चे की परिस्थितिकी की व्याख्या, पर्यावरणीय संदर्भों के विभिन्न स्तरों पर करते है। इनमें अत्यधिक समीपस्थ से लेकर दूरस्थ प्रणालियां तक आने वाली सभी प्रणालियों को शामिल किया गया है। व्यक्ति को केंद्र में रखते हुए अन्य प्रणालियां संकेंद्रिक पर्तों का निर्माण करती हैं। यह संरचना रूस की 'नैस्टिंग डॉल'' की तरह है – एक स्तर की पर्त दूसरे स्तर की पर्त में खुलती है। 2006 में ब्रानफेनब्रेनर ने अपने सिद्धांत में संशोधन करके इसे जैव–पारिस्थितिक का प्रणाली' नाम दिया, जहाँ व्यक्ति की उसकी विकास प्रक्रिया में सक्रिय भूमिका पर बल दिया जाता है।

ब्रानफेनब्रैनर प्रतिमान में विश्लेषण के स्तर	
स्तर 1	व्यक्ति संबंधी/व्यक्तिगत– जो सम्बंध तथा पर्यावरण मनुष्य की विकास–प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, उनका चयन एक सीमा तक मनुष्य कर सकते हैं।
स्तर 2	माइक्रो प्रणालियाँ (लघु प्रणालियाँ) – माइक्रो प्रणालियाँ मनुष्य की सबसे नज़दीकी पर्यावरणीय पर्त है जो दूसरों से मनुष्य के अंतःक्रिया व संपर्कों का निर्धारण करती है। जैसे परिवार–जन, शिक्षक व साथी।
स्तर 3	मेसो प्रणालियाँ (समूह प्रणालियाँ) – माइक्रो प्रणालियाँ के बीच सम्बंधों का मनुष्य के विकास पर प्रभाव पड़ता है। माइक्रो प्रणालियाँ के बीच सम्बंधों को समझना – जैसे, बच्चे के दोस्तों तथा उसके माता–पिता के बीच सम्बंध, माता–पिता तथा शिक्षकों के बीच सम्बंध।
स्तर 4	एक्सो–प्रणालियाँ (बाह्य प्रणालियाँ) – माइक्रो प्रणालियाँ तो बच्चे के विकास को प्रभावित करती है, परन्तु बाहरी प्रणालियों से माइक्रो प्रणालियों के सम्बंधों का भी बच्चे के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। जैसे, बच्चे के माता–पिता के कार्यस्थल व कार्य–संस्थान। माता–पिता का रोजगार के कारण बच्चे से अलग रहना तथा अनुकूल वातावरण न होने पर माता–पिता का तनाव ग्रस्त रहता आदि सब बच्चे की विकास प्रक्रिया पर विपरीत प्रभाव डालते हैं।
स्तर 5	मेक्रो–प्रणाली (दीर्घ प्रणाली) – अन्य सभी प्रणालियों के बीच सम्बंधों की स्थितियाँ मनुष्य की विकास प्रक्रिया को प्रभावित करती हैं। सांस्कृतिक, धार्मिक तथा सामाजिक–आर्थिक संगठनों पर इनके प्रभाव देखे जा सकते हैं। उदाहरण के लिए परिवार का सामाजिक–आर्थिक स्तर बच्चे के माता–पिता के पास संसाधनों की उपलब्धता को रेखांकित करता है। बच्चे का स्वास्थ्य, उसकी शिक्षा तथा सुरक्षा इससे प्रभावित होती है

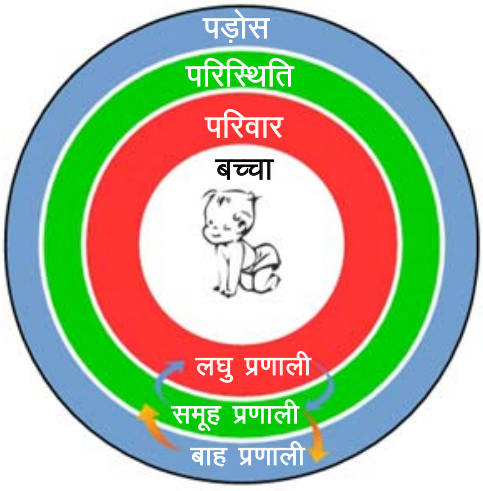

चित्र 3.2: ब्रानफेनब्रेनर के प्रणालियों का सिद्धांत

स्रोत : Cognitive development: The Science of Childcare (firstdiscoverers.co.uk)

दुर्गानंद सिन्हा का अभाव (डेप्रवेशन) का प्रतिमान – सुप्रसिद्ध भारतीय मनोवैज्ञानिक दुर्गानंद सिन्हा (1922–1998) ने 1982 में भारतीय संदर्भ में अभाव (डेप्रवेशन) का अध्ययन करने के लिए ब्रानफेनब्रेनर के पारिस्थितिकी–प्रतिमान को स्वीकार किया था, उन्होंने बच्चे को परिस्थितिकी की कल्पना दो संकेंद्रित पर्तों से मिलकर की है :

i) ऊपरी तथा अत्यधिक स्पष्ट पर्तें – इनमें घर, परिवार, विद्यालय तथा साथियों का समूह शामिल है। इन के सम्पर्क के कारण भौतिक पदार्थों, सामाजिक भूमिकाओं तथा सम्बंधों का बच्चे पर प्रभाव पड़ता है।

ii) सहयोगी तथा परिवर्ती पर्त – इसमें वे भौतिक व सांस्कृतिक पर्यावरण शामिल हैं जिनके बीच बच्चा रहता है और अपने निकटतम समाज के वर्ग, जाति व उपलब्ध संसाधनों से प्रभावित होता है।

ऊपरी तथा सहयोगी पर्ते मिलकर बच्चों के पारस्परिक सम्बंधों, सामाजीकरण के घटकों, बच्चे की संज्ञानात्मक व सोच सम्बंधी गतिविधियों को प्रभावित करती हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 4

1) ब्रानफेनब्रेनर प्रतिमान के निम्न स्तरों के विश्लेषणों का सही मिलान कीजिए।

i) व्यक्तिगत	अ) खिलाड़ी के माता–पिता का सामाजिक–आर्थिक स्तर
ii) माइक्रो प्रणाली	ब) कोच व खिलाड़ी के बीच संबंध
iii) मेसो–प्रणाली	स) खिलाड़ी
iv) मेक्रो–प्रणाली	द) कोच – खिलाड़ी के माता–पिता

2) सिन्हा के डेप्रवेशन (अभाव) के प्रतिमान की व्याख्या कीजिए।

.....

.....

.....

बॉक्स 3.1: विकासवादी विकासात्मक मनोविज्ञान

विकासवादी अवधारणा तथा विकासात्मक सिद्धांत असंगत क्षेत्रों के रूप में अस्तित्व में आए हैं। आरम्भ में, जब **डार्विन (1859)** ने अपने प्राकृतिक चयन के सिद्धांत का आविष्कार किया था, तब उसकी सोच के केंद्र में भ्रूण की मूल उत्पत्ति, आकार–ग्रहण तथा विकास था। विकासवादी अवधारणा और विकासात्मक सिद्धांत दोनों का आरंभिक बिंदु एक ही है, आनुवंशिकी सम्बंधी क्षेत्र की विकास प्रक्रियाओं के दौरान दोनों अलग–अलग हो गये, क्योंकि मानव–प्रजातियों में विकासात्मक प्रक्रिया का निर्धारण करते हैं। विकासात्मक मनोविज्ञान का क्षेत्र धीरे–धीरे इस जानकारी के साथ उभर कर आया कि संज्ञानात्मक प्रक्रिया को विकासवादी परिप्रेक्ष्य में बेहतर ढंग से कैसे समझा जा सकता है और मनुष्य अनेक प्रकार का व्यवहार क्यों करते हैं, वे कैसा व्यवहार करते हैं यह विकासात्मक अध्ययन का केंद्रीय विषय है।

आरम्भ में वयस्कों को तथा संज्ञान को केंद्र में रखकर अध्ययन किया जाता था। विकासवादी विकासात्मक मनोविज्ञान (Evolutionary Developmental Psychology)] इस बोध के साथ सामने आया कि प्राकृतिक चयन की प्रक्रिया सभी जीवन अवधियों में महत्वपूर्ण है, परन्तु जीवन विकासात्मक–अवधियों में इसका विशेष रूप से महत्व है। इस प्रकार हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि विकासवादी विकासात्मक मनोविज्ञान का क्षेत्र मानव विकास में विकासवादी सिद्धांतों पर विशेष रूप में जोर देता है। इस अंतनिर्हित अनुमान के साथ कि प्राकृतिक चयन की प्रक्रिया जीवन के सभी चरणों में जारी रहती है।

विकासवादी विकासात्मक मनोविज्ञान के विशेषज्ञ 'स्थागित अनुकूलन' की बात करते हैं। ये वे व्यवहार हैं जो बाल्यावस्था से प्रौढ़ावस्था की अवस्था तक पहुँचने की तैयारी के लिए अनिवार्य घटक के रूप में सामने आते हैं। उदाहरण के लिए जब कम आयु से लड़के लड़कियाँ उन्मुक्त भाव से वयस्कों की भूमिकाओं का अभिनय (फ्री प्लै) करते हैं, तब लड़कियों प्रायः माता–पिता या परवरिश करने वालों की भूमिकाएँ अधिक पसंद करती हैं तथा लड़के चुनौतियों भरी भूमिकाएँ निभाना (रफ एंड टफ) ज्यादा पंसद करते हैं। लड़के और लड़कियों की मानसिकता के ये अंतर उन्हें भविष्य की वयस्क सामाजिक भूमिकाओं के लिए तैयार करती है। ईडीपी विशेषज्ञ 'व्यक्तिवृत्तीय अनुकूलन' की बात भी करते हैं जो एक खास समयावधि में विशेष रूप से सक्रिय रहता है बाद में समाप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए जन्म से पहले भ्रूण को भोजन तथा ऑक्सीजन देने के लिए गर्भनाल स्वयं आकार ग्रहण कर लेती है और जन्म के बाद इसका कोई काम नहीं रह जाता। अतः जन्म के बाद इसे अलग करके फेंक दिया जाता है।

3.2 सारांश

इकाई के अंत में उन सभी प्रमुख बिन्दुओं को संक्षेप में प्रस्तुत किया जायेगा, जिन्हें अब तक पढ़ा है –

- विकासात्मक सिद्धांतकार तथा स्नायु विज्ञान के विशेषज्ञों के अनुसार शैशवावस्था तथा बाल्यावस्था के विकास–चरणों के दौरान कुछ वर्षों का समय व्यक्ति के जीवनपर्यंत होने वाले विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

- संज्ञानात्मक विकास का सरोकार इस बात से है कि मनुष्य के सीखने, ज्ञान–अर्जित करने तथा अर्जित ज्ञान को दुनियाँ के सम्पर्क में आने पर व्यवहार में लाने की पूरी प्रक्रिया क्या है।
- संज्ञानात्मक विकास के सैद्धांतिक योगदान की व्याख्या करने का बीड़ा उठाने वाले मनोविज्ञानी जीन पियाजे संज्ञानात्मक विकास के क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान दिया तथा बच्चे के अपने चारों ओर मौजूद वस्तुओं के साथ अंतर्सम्बंध स्थापित करने की प्रक्रिया पर जोर दिया और बताया कि यह प्रक्रिया बच्चे के संज्ञानात्मक विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- लेव वाइगोत्सकी ने संज्ञानात्मक विकास के सामाजिक सांस्कृतिक सिद्धांत का आविष्कार किया था जो बच्चे के कौशल–युक्त वयस्कों तथा साथियों के साथ सामाजिक अंतर्सम्बंधों को महत्व देता है।
- व्यवहारवादी मनोवैज्ञानिक स्किनर का विश्वास है कि भाषा का विकास, बच्चों के सीखने के प्रयास की रणनीतियों जैसे दूसरों की नकल करना, सक्रियता, संकेतों तथा लाभकारी प्रणालियों आदि के माध्यम से हुआ है जो बच्चों को भाषा सीखने में सदा सहयोगी रहे हैं।
- नाओम चोमस्की के अनुसार बच्चे भाषा सीखने की योग्यता लगभग अप्रयास ही प्राप्त कर लेते हैं। भाषा सीखने की जटिल प्रणाली मनुष्य के मस्तिष्क में मौजूद रहती है। इसे भाषा–अर्जन उपकरण (एलएडी) कहा जाता है।
- कोहल्बर्ग ने नैतिक विकास के सिद्धांत की तीन चरणों में व्याख्या की है – सामान्य पूर्व नैतिकता, सामान्य नैतिकता और सामान्य पश्चात नैतिकता। कैरॉल गिलिगन के अनुसार कि पुरुषों व स्त्रियों के नैतिक व मनोवैज्ञानिक रूझान अलग–अलग होते हैं।
- सूचना प्रसंस्करण प्रतिमान एक स्मृति–प्रतिमान है जो यह व्यवस्था करता है कि सूचना को कम या लम्बी अवधि के लिए किस प्रकार प्राप्त किया जाय तथा संग्रहीत किया जाए।
- ऐरिक ऐरिक्सन ने 1950 में शैशवावस्था से वृद्धावस्था तक बने रहने वाले सामाजिक गतिविज्ञान के प्रभावों की व्याख्या की थी।
- अलबर्ट बंडुरा ने सामाजिक अधिगम के सिद्धांत का आविष्कार किया जो यह बतात है कि सामाजिक व्यवहार को प्राप्त दूसरों के व्यवहार को देखने तथा उसकी नकल करने से किया जाता है।
- जॉन बॉल्बी का विश्वास था कि जिन बच्चों की अत्यन्त मौलिक सामाजिक, संवेगात्मक तथा बौद्धिक आवश्यकताओं की उपेक्षा की जाती है, उनमें वयस्कों के साथ सम्बंध स्थापित करने की क्षमता का विकास नहीं हो पाता। बच्चे संबंधन व्यवहार प्रणाली के साथ जन्म लेते हैं जो उन्हें संबंधन के स्रोत की और ले जाती है और फिर उसके साथ निकटता बनाये रखने पर जोर देती रहती है।
- सीखने तथा संज्ञानात्मक विकास की प्रक्रिया लैंगिक भूमिका के विकास का निर्धारण करती हैं तथा उसी से लैंगिक भूमिका की पहचान तय होती है।
- परिस्थितिकी परिप्रेक्ष्य इस बात पर विचार करता है कि व्यक्तियों के भौतिक – सांस्कृतिक संदर्भों के साथ सम्बंध कैसे हैं और कैसे होने चाहिए। उरी

ब्रानफेनब्रेनर द्वारा 1979 में परिस्थितिकी 1979 में किये गये शोध के अनुसार मानव विकास में पर्यावरणीय प्रणालियों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इस प्रतिमान को भारतीय मनोवैज्ञानिक दुर्गानंद सिन्हा ने भारतीय संदर्भ में मान्यता प्रदान की। इसके अनुसार परिस्थितिकी मनुष्य के इर्द–गिर्द दो प्रकार को पर्तों से निर्मित होती है, ऊपरी तथा अत्यधिक स्पष्ट पर्तें, तथा सहयोगी व परिवर्ती पर्तें।

3.3 मुख्य शब्द

संभावित जीवन–अवधि : किसी खास वर्ष में जन्म लेने वाले मनुष्य के जीवित रहने की औसत संभावना – आयु अवधि संभावित जीवन अवधि कहलाती है।

द्विभाषिता : प्रभावी ढंग से दो भाषाओं का उपयोग करने की क्षमता।

बहुभाषिता : कई भाषाओं का उपयोग करने की क्षमता।

वस्तु स्थैर्य : नज़रों के सामने से हटा दिये जाने के बाद भी किसी वस्तु का स्मृति में अस्तित्व उसी तरह बना रहना।

क्रियाप्रसूत अनुकूलन : सीखने की विधि जो नकारात्मक अथवा सकारात्मक पुर्नबलन प्रदान करती है जो व्यवहार की जनक होती हैं।

3.4 पुनरावलोकन प्रश्न

1) पियाजे के संज्ञानात्मक विकास के सिद्धांत का वर्णन कीजिए।
2) ऐरिक्सन के मनोसामाजिक सिद्धांत का वर्णन कीजिए जो बाल्यावस्था तथा प्रौढ़ावस्था के दौरान उपयोगी होता है।
3) कोहल्बर्ग के नैतिक विकास के सिद्धांत की समीक्षा कीजिए।
4) मानव विकास के संदर्भ में परिस्थितिकी प्रणालियों की विवेचना कीजिए।

3.5 संदर्भ एवं पढ़ने के सुझाव

Camilleri, C. (2015). In a different voice Carol Gilligan. Accessed https://www. researchgate.net/publication/275648392_Carol_Gilligan on 12 Jan. 21 at 12.36 hours

Ciccarelli, S.k., & Meyer, G.E. (2008). *Psychology* (South Asian ed). Pearson.

Ecological perspectives for successful schooling practice, https://files.eric.ed.gov /fulltext/ED233501.pdf Accessed on 16 Jan. 21 at 10.33 hours.

Ferguson, K. T., Cassells, R. C., MacAllister, J. W., & Evans, G. W. (2013). The physical environment and child development: An international review. *International Journal of Psychology*, *48*(4), 437-468.

https://data.unicef.org/topic/early-childhood-development/home-environment/ Accessed on 02 Jan. 21 at 13.23 hours

https://www.researchgate.net/publication/314694646_Attachment_Theory Accessed on 7 January 2021 at 12.47 hours

https://www.researchgate.net/publication/316046039_Ecological_Systems_Theory Accessed on 6 January 2021 at 17.06 hours

Kloos, B., Hill, J., Thomas, E., Wandersman, A., & Elias, M. (2011). *Community psychology: Linking individuals and communities*. Nelson Education.

Lewin, K. (1939). Field theory and experiment in social psychology: Concepts and methods. *American journal of sociology*, *44*(6), 868-896.

Machluf, K., Liddle, J.R., & Bjorklund, D.F. (2014). An Introduction to Evolutionary Developmental Psychology. *Evolutionary Psychology, 12* (2). Retrieved from http://doi.org/10.1177/147470491401200201

Maldonado-Carreño, C., & Votruba-Drzal, E. (2011). Teacher–child relationships and the development of academic and behavioral skills during elementary school: A within-and between-child analysis. *Child development*, *82*(2), 601-616. Accessed on 3 January 2021 at 11.30 hours

Orenstein GA, Lewis L. Eriksons Stages of Psychosocial Development. [Updated 2020 Nov 22]. In: StatPearls [Internet]. Treasure Island (FL): StatPearls Publishing; 2020 Jan-Available from: https://www.ncbi.nlm.nih.gov/books/NBK556096/ Accessed on 4 January 2021.

Riffin C.A., Löckenhoff C.E. (2015) Life Span Developmental Psychology. In: Pachana N. (eds) Encyclopedia of Geropsychology. Springer, Singapore. https://doi.org/10.1007/978-981-287-080-3_107-1

Understanding human development: theories and approaches, https://us.sagepub.com/sites/default/files/upm-assets/106359_book_item_106359.pdf Accessed on 15 Jan. 21 at 14.05 hours

Yilmaz O., Bahçekapili H.G., Sevi B. (2019) Theory of Moral Development. In: Shackelford T., Weekes-Shackelford V. (eds) Encyclopedia of Evolutionary Psychological Science. Springer, Cham. https://doi.org/10.1007/978-3-319-16999-6_171-1

3.6 ऑनलाइन संसाधन

- Article on Vygotsky's Socio-Cultural Theory;

  Vygotsky's Socio-Cultural Theory. "Every function in the cultural… | by Sila Cakmak | BrainBiguous | Medium

- On Kohlberg's theory of Moral development, visit;

  https://youtu.be/GTzBrjxKHLg

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए के उत्तर

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 1

1) i) समीपस्थ विकास का क्षेत्र
   ii) अहंकार केंद्रितता
   iii) केंद्रितता
   iv) व्यक्तिगत कल्पित कहानी

2) समीपस्थ विकास का क्षेत्र बच्चे के वास्तविक विकास, स्तर तथा शिक्षा, आदि। प्राप्त करने के बाद उपलब्ध ठोस विकास के बीच का अंतराल है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 2

1) चोमस्की कहते है कि भाषा का अर्जन करना जन्मजात योग्यता है, जबकि स्किनर का विश्वास है कि बच्चा सीखने के पुनर्बलन सिद्धांतों तथा अन्य सीखने की रणनीतियों जैसे नकल करना, सक्रियता व प्रयत्नों द्वारा सीखता है।

2) कोहल्बर्ग और पियाजे का मानना है कि एक अवस्था से दूसरी अवस्था तक परागमन संज्ञानात्मक विकास के दौरान संज्ञानात्मक क्षमताओं के कारण संभव हो पाता है। गिलिगन का मानना है कि व्यक्ति के स्वयं में आने वाले परिवर्तन एक अवस्था से दूसरी अवस्था तक परागमन करने के कारण होते हैं।

3) II. अ (iii), ब (iv), स (i), द (ii)

5) i) सामाजिक व्यवस्था बनाम रखना।
   ii) अच्छे पारस्परिक सम्बंध
   iii) सार्वभौमिक सिद्धांत
   iv) सामाजिक प्रतिरोध तथा व्यक्तिगत अधिकार
   v) आज्ञाकारिता तथा दंड मूलकता

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 3

1) III.अ (iv), ब (i), स (iii), द (ii)

2) (i) असत्य (ii) सत्य (iii) असत्य (iv) सत्य

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए 4

1) (i) स (ii) ब (iii) द (iv) अ

2) ब्रानफेनब्रेनर के प्रतिमान को भारतीय संदर्भ में दुर्गानंद सिन्हा ने स्वीकार किया। इनके अनुसार मनुष्य के इर्द–गिर्द पर्यावरण की दो पर्तें होती हैं – बाहरी पर्त में साथी सम्बंधों, मित्र आदि आते है। दूसरी सहयोगी पर्त में सांस्कृतिक तथा भौतिक पर्यावरण आता है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY